हिन्दी तथा मलयालम
की
आधुनिक साहित्यिक शब्दावली

खंड (१)

हिन्दी विभाग

हिन्दी तथा मलयालम
की
आधुनिक साहित्यिक शब्दावली

खंड (१)

संपादक

डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

डॉ. एल. सुनीताबाई

जे. सुगंधवल्ली

प्रकाशक

हिन्दी विभाग

कोचिन विश्वविद्यालय

कोचिन–२२

मूल्य: 15/-

1980

Hindi tatha Malayalam Ki Adhunik Sahityik Sabdavali

Part one

Edited by

Dr. N. E. Viswanatha Iyer

Dr. L. Suneetha Bai

J. Sugandhavalli

Pub:

Dept. of Hindi

Cochin University

Cochin-22

Price : Rs 15/-

1980

निवेदन

कोचिन विश्वविद्यालय का हिन्दी विभाग केरल की भाषा और साहित्य का प्रामाणिक परिचय हिन्दी के माध्यम से देता आ रहा है। हिन्दी और मलयालम भाषा एवं साहित्य की तुलना का भी विनम्र प्रयास यहाँ होता आ रहा है। इस ग्रंथ में हिन्दी और मलयालम की आधुनिक साहित्यिक शब्दावली का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

हिन्दी अब केवल एक भारतीय भाषा न रहकर भारतीय संस्कृति की वाहिनी हो चुकी है। वह अन्य भारतीय भाषा के विकास में भी शब्ददान की सहायता कर रही है। यही नहीं, अन्य भाषाओं से भी हिन्दी अनेक प्रसंगों के लिए शब्द स्वीकार कर सकती है।

हिन्दी और मलयालम की साहित्यिक शब्दावली की व्युत्पत्ति बताने का प्रयास पहले कम ही हुआ है। इसलिए यहाँ उक्त विषय के विवेचन में तुलना के अलावा साहित्यिक शब्दों की व्युत्पत्ति भी बताई गई है। यह व्युत्पत्ति साहित्य के छात्रों के ज्ञान में वृद्धि करेगी। अनुसंधान की एक नई दिशा भी खुलेगी।

प्रारंभ में पूर्ण ग्रंथ का प्रकाशन एक ही जिल्द में करने की योजना थी। परन्तु छपाई के शुरू होने पर असुविधा के कारण विवश होकर इसे दो खंडों में विभक्त करना पडा। अब पहला खंड प्रकाशित हो रहा है। दूसरा खंड विभाग की तरफ से शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

इस महत्वपूर्ण कार्य को हमने यथासाध्य करने का प्रयत्न किया है। आशा है, इससे तुलनात्मक अध्ययन में कुछ न कुछ सहायता मिलेगी। हम कोचिन विश्वविद्यालय के वैसचान्सलर डॉ एम. वी. पैली तथा अन्य अधिकारियों का आभार मानते हैं जिन्होंने हिन्दी विभाग को ऐसे ग्रंथ के प्रकाशन में पूरी सहायता दी है।

संपादक

संकेत सूची

हिन्दी

संक्षिप्त रूप	ग्रन्थ
अ० ना० शा०	अभिनव नाट्य शास्त्र
अ० और० आ०	अनुसंधान और आलोचना
का० के० रू०	काव्य के रूप
चि० द्० भा०	चिन्तामणि द्वितीय भाग
न० सा० न० प्र०	नया साहित्य नये प्रश्न
न० प्र० पु० नि०	नये प्रतिमान पुराने निकष
पा० का० की० प०	पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परंपरा
मा० मू० और० सा०	मानवमूल्य और साहित्य
र० मी०	रसमीमांसा
वि० और० वि०	विचार और विश्लेषण
सा० की० आ० तथा, अ० नि०	साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध
सा० को०	साहित्य कोश
सा० रू०	साहित्य रूप
सा० शा०	साहित्य शास्त्र
सा० स०	साहित्यसहचर
सा० अ० के० प्र०	साहित्यिक अनुसंधान के प्रतिमान
सि० और० अ०	सिद्धान्त और अध्ययन
हि० उ० और० य०	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद
हि० का० की० प्र०	हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ
हि० का० में० प्र०	हिन्दी काव्य में प्रगतिवाद
हि० का० वि० और० मू०	हिन्दी काव्य विश्लेषण और मूल्यांकन
हि० ना० के० सि० औ० ना०	हिन्दी नाटक के सिद्धान्त और नाटककार
हि० सा० औ० वि० वा०	हिन्दी साहित्य और विभिन्न वाद

संस्कृत

संक्षिप्त रूप	ग्रन्थ
वाच॰	वाचस्पत्यम्
श॰ क॰	शब्दकल्पद्रुम:
आ॰	आप्ते का संस्कृत अंग्रेजी कोश
मो॰ वि॰	मोनियर विलियम्स

मलयालम

संक्षिप्त रूप	ग्रन्थ
आ॰ सा॰	आधुनिक साहित्यम्
क॰ सा॰ ओ॰ प॰	कलयुं साहित्यवुं ओरु पठनम्
का॰ पी॰	काव्यपीठिक
का॰ स॰	काव्यसमीक्ष
ना॰ क॰	नाटकान्तं कवित्वम्
नो॰ प्र॰	नोवल प्रस्थानंङ्ळ्
नो॰ सा॰	नोवल साहित्यम्
नो॰ सि॰ सा॰	नोवल सिद्धियु साधनयुं
पा॰ सा॰ द॰	पाश्चात्यसाहित्य दर्शनम्
म॰ सा॰ च॰	मलयालसाहित्यचरित्रम्
वि॰ धा॰	विचारधार
वि॰ वि॰	विचारविप्ळवम्
वि॰ प्र॰	विमर्शनत्तिन्टे प्रश्नंङ्ळ्
वि॰ वी॰	विमर्शवीथि
सि॰ जे॰ तो॰	सि॰ जे॰ तोमस

प्राक्कथन

'प्राचीन कवि केशवदास' मलयालम काव्यधारा (प्राचीनं, आधुनिक) केरल की वीरगाथाएं' और केरल की जनकथाएँ २ खंड के बाद हिन्दी–प्रेमी पाठक गण की सेवा में एक तुलनात्मक शोध परक ग्रन्थ प्रस्तुत है ।

मलयालम एवं हिन्दी की साहित्यिक शब्दावली के क्षेत्र में लक्षित एकता भारत की भावात्मक एकता का स्पष्ट प्रमाण है । आधुनिक साहित्यिक शब्दावली में हिन्दी यद्यपि अधिक स्पष्ट है तथापि अर्थसंगति एवं औचित्य की दृष्टि से अनेक मलयालम शब्द अब भी हिन्दी को दिशा दिखा सकते हैं । इस 'शब्दावली' के अध्ययन से यह तथ्य खुल सकता है । दोनों भाषाओं के विद्वान नये नये उपादेय शब्दों का ग्रहण कर सकते हैं ।

इस ग्रन्थ का संकलन हिन्दी एवं मलयालम के चुने हुए प्रामाणिक समीक्षा ग्रन्थों की सामग्री के आधार पर किया गया है । व्युत्पत्ति के लिए मुख्यतः 'वाचस्पत्यम्' और 'शब्दकल्पद्रुम' का सहारा लिया गया है। अनेकों आधुनिक साहित्यिक शब्द यद्यपि तत्सम दीखते हैं तथापि उनकी गठन गलत ढंग से और मनमाना की गई है । ऐसे संदिग्ध प्रसंगों पर संभव' व्युत्पत्ति ही दिखाई गई है । इसे अन्तिम या अतिशय प्रामाणिक न माना जाय ।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना में प्रमुख योग श्रीमती जे. सुगन्धवल्ली एम. ए. तथा डॉ. एल. सुनीता का (दोनों विभाग के सहायक हैं) हैं । रचना को और भी उपादेय बनाने के योग्य सुझाव सुधी सहृदय दें ताकि अगले संस्करण में इसे सुधार सके ।

संपादक

डा. विश्वनाथअय्यर

हिन्दी विभाग
कोचिन विश्वविद्यालय
दीपावली 1979

भूमिका

मानव को मानवेतर जीवों से श्रेष्ठ प्रमाणित करनेवाली शक्ति वाक्‌शक्ति है जो अभ्यास और अध्ययन से बढती है। इसी के वैभव से संसार का अनन्त वाङमय रचा गया है। वाङमय का विकास मानव के विकास का प्रकट रूप है। अतएव भारतदेश के मानव-समाज के विकास की दिशाएँ इसकी विभिन्न भाषाओं के विकास से व्यंजित होती हैं। प्राचीनता की दृष्टि से संस्कृत का इन भाषाओं में अन्यतम स्थान है। वही सदियों तक इस देश के विद्वानों की भाषा तथा साहित्यिक विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम रही। आगे चलकर संस्कृत-भिन्न प्राकृत आदि भाषाओं का जन्म और विकास इसी देश में हुआ तो उन भाषाओं की भी साहित्यिकता प्रतिष्ठित हुई। इनकी साहित्यिकता की वृद्धि में संस्कृत साहित्य का सबन्ध मुख्य सहायक रहा। विजेता का अनुकरण विजित करता है। बडों की नकल छोटे करते हैं। उच्च होना और उच्च लोगों का अनुकरण करना अन्य लोगों की प्रवृत्ति है। इसी प्रवृत्ति के फलस्वरूप संस्कृतेतर भाषाएँ कदम कदम पर संस्कृत के पथ पर चलीं। फिर भी अभिजात और सामान्य का अन्तर बना ही रहा। सामान्य अभिजात की ओर श्रद्धा से देखता था तो अभिजात सामान्य की ओर घृणा और उपेक्षा की दृष्टि डालता था। प्रसंगवश सूझता है कि यदि अभिजात की ओर ध्यान दिए बिना सामान्य वग अपनी ही दृष्टि से विकास करता तो अवश्य उसका ठोस योगदान संपन्न होता। उसी में अनुपम तत्व–रत्न निकल आते।

आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का पूर्वाद्‌र्ध संस्कृत साहित्य से प्रभावित रहा है और उत्तराद्‌र्ध अंग्रेज़ी साहित्य से। कोई भी विद्वान या छात्र इन दोनों के प्रभावों के अध्ययन के बिना हिन्दा, मलयालम या अन्य किसी भारतीय भाषा का अध्ययन नहीं कर पाता। इस प्रकार दो वर्तमान भाषाओं की परस्पर तुलना के लिए अन्य दो माध्यमों का सहारा लेना पडता है। तुलनीय भाषाओं में सहज व देशी प्रवृत्तियों का आदान-प्रदान कम लिया जाता है। वेश-भूषा, खान-पान तथा आचार-विचार में तुलनीय भाषा के क्षेत्रों में परस्पर प्रभाव बढता जाता है। जब आत्मीयता की सतत वृद्धि होती है तब साहित्यिक दिशाओं का भी विकास होता है। इसी से सच्ची भावात्मक एकता की दशा बनती है।

खैर, भाषा की नींव शब्द है और शब्दों का अध्ययन बडा ही मोहक विषय रहा है। कितनी ही दृष्टियों से शब्दों का अध्ययन-विशेषण हो सकता है। भारतीय दृष्टि से रूढ, यौगिक और योगरूढ़ का विभाजन सबसे सरल विभाजन है। यह विभाजन इस तथ्य का प्रमाण है कि शब्द और अर्थ का संवन्ध प्राय: यदृच्छा–संबन्ध है। हाँ, किसी किसी की व्युत्पत्ति बताई जा सकती है। कोई कोई शब्द व्युत्पत्ति अनेक अर्थों का बोध कराते हुए भी अर्थ-विशेष में रूढ होता है। रूढि और योगरूढि के इन तत्वों की स्वीकृति ने बहुधा लोगों को इन शब्दों के उद्‌गम की व्याख्या से विमुख तक कर दिया है। लोग शब्दों के वर्तमान स्वरूप को ज्यों का त्यों स्वीकार करने को तैयार हैं। उदाहरणार्थ हम जिस समीक्षा-क्षेत्र के शब्दों की चर्चा यहाँ करते है उसमें भी अनेक शब्द रूढ हैं, अन्य योगरूढ हैं। कुछ यौगिक शब्द भी अवश्य हैं। रसादि काव्यांग, अलंकार, नायक-नायिका भेद आदि क्षेत्रों में इन दोनों के उदाहरण मिलते हैं। जो विदेशी रूढ शब्द है उनका भाव समझना कठिन है। तिस पर भाव समझने के बाद भी उनके लिए उचित शब्दांतर की रचना करना कठिन है।

शब्दों की अन्य विधा वाचक, लक्षक और व्यंजक की है। वाचक, लक्षक तथा व्यंजक शब्दों का अर्थ यथाक्रम वाच्य, लक्ष्य तथा व्यंग्य, होता है। इस भेद का अनुवाद-क्षेत्र में विशेष महत्व है, जटिलता भी। उदाहरणार्थ जहाँ अंग्रेज़ी या संस्कृत के किसी खास संकेतित शब्द का अनुवाद हिन्दी एवं मलयालम में करने की जरूरत पडती है वहाँ वाचक शब्दों का अनुवाद सुलभता से हो सकता है। वाचक शब्द वा वाच्य अर्थ सीधे सरल ढंग से सिद्ध होते हैं। पर लक्षक और व्यंजक शब्द उनकी भाषा-विशेष में कई विशष बातों के सम्मिलित प्रयोग से बनते हैं। शब्दार्थ के साथ वातावरण, परंपरा, वक्ता,-श्रोता कि विशषता आदि कई बातों के बिना लक्षण–व्यंजना–वृत्तियाँ नहीं चलतीं। अर्थात् लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ जहाँ मूल भाषा में भी शीघ्रता से पर्यायान्तर के ज़रिये स्पष्ट समझ में नहीं आते वहाँ अनुवाद में छोटे या बडे वाक्यों में पूरा भाव उतारना बडा मुश्किल पडता है। इसके लिए व्याख्या की ज़रूरत होती है। वाच्यार्थ में भी अनुवाद में लंबी लंबी व्याख्या कि आवश्यकता पहले ही अनुभव होती है। लक्षक-व्यंजक शब्दों का एक एक शब्द में अनुवाद भी अधूरा रह जाता है। जब हम अनुवाद में उसी मूल शब्द का प्रयोग करते हैं तब सामान्यत: वाक्य का अर्थबोध भी मुश्किल से होता है। अतएव अनुवाद में संकेतित शब्दों को छोड सामान्य शब्दों का अनुवाद ही करना आसान पडता है। संकेतित शब्दों में मल का

भाव लानेवाले अनूदित शब्द यदि हम रख सकें तो धीरे धीरे वे भी सुगम तथा लोकप्रिय बनें।

उपर्युक्त दो कसौटियों के अलावा अन्य कसौटियों पर भी शब्दों की परीक्षा हो सकती है। जैसे, सामान्य, तकनीकी (संकेतित) और अद्र्ध-तकनीकी (अद्र्ध संकेतित)। एक ही शब्द सामान्य की कोटि में रहकर एक अर्थ का बोध कराता है तो संकेतित की कोटि में उसका अर्थ भिन्न होता है। संकेतित शब्दावली के ध्वनिरूप से ही सामान्य श्रेणी के लोग परिचित कहते हैं न कि अर्थरूप से। ऐसे शब्दों के बिषय में भाषा को साधारण जानकारी काम नहीं देती। गणित के प्रश्नों से भरी पुस्तकें, वैद्यक-ग्रन्थ आदि उदाहरण हैं। इन शब्दों का अर्थ दूसरों के मुँह से ही पहले पहल समझना पडता है क्योंकि इनकी व्युत्पत्ति बताना कठिन है। वैज्ञानिक और अन्य विशषज्ञ तकनीकी शब्द यत्नपूर्वक गढ लेते हैं क्योंकि सामान्य शब्दों से उनकी ।ववक्षा पूर्णतः प्रकट नहीं हो सकती। सबसे प्रसिद्ध उदाहरण है 'एक्सरे'। जो नई प्रकाश-किरण फूट निकली उसका नामकरण असंभव लगा तो लाचारी से नाम दिया गया – 'एक्स' किरण। 'रामन सिद्धान्त', न्यूटन–सिद्धान्त' आदि शब्दों की रचना भी संकेतित अर्थों की विशिष्टता दिखाने के लिए की गई है। औषध-विज्ञान में 'कार्मिनेटाव' 'मेग सल्फ' आदि का अर्थ सामान्य शब्दकोष में नहीं हो सकता। यों ज्योतिष के 'दृष्टि', 'वेध' 'रज्जु' आदि बिलकुल संकेतित शब्द हैं। इनका सामान्य अर्थ जानने से अर्थबोध नहीं होता।

अद्र्धतकनीकी शब्द भी होते हैं जिनका सामान्य व्यवहार में प्रयोग होता है और हम जिनसे परिचित है। अन्य भाषाभाषी के लिए वे शब्द बिलकुल अपरिचित्त हो सकते हैं। तथापि उस भाषा के वक्ता के लिए वे तकनीकी होते हुए भी परिचित हैं। दूध दुहना, तेल पेरना, गाडी खींचना, भोग चढाना आदि उदाहरण है। इन अद्र्धसंकेतित तथा संकेतित शब्दों का अंतर यह भी है कि अर्द्धसंकेतित शब्द स्थानभेद और युग-भेद से बदल सकते हैं। कई पर्यायवाची शब्द प्रयुक्त हो सकते हैं। उदाहरण के लिए मलयालम में चूना पोतने के लिए कहीं 'वेळ्ळवलिक्कुक' है कहीं 'चुण्णाम्पु अटिक्कुक' है, कहीं 'चुण्णाम्पु पूशुक' है। साधारण क्रिया के रूप में 'वलिक्कुक' 'अटिक्कुक', और 'पूशुक' के जो अर्थ हैं उन अर्थों से ये अर्द्धसंकेतित अर्थ भिन्न है। इनका अनुवाद अनूदित भाषा के अर्द्धतकनीकी शब्दों के प्रयोग के ज़रिये करना चाहिए। अर्द्धसंकेतित शब्दों का मूल रूप

अन्य भाषा में ज्यों का त्यों स्वीकार करने से भाषा में कृत्रिमता अनुभव होती है ।

हमने अभी शब्दों की तीन कसौटियों पर विचार किया (अ) रूढ, यौगिक, योगरूढ (आ) वाचक, लक्षक, व्यंजक (इ) तकनीकी, अर्द्धतकनीकी, सामान्य । ज्यों ज्यों भाषा में भावसंपत्ति बढती है और नये नये उत्तम ग्रन्थ लिखने की प्रवृत्ति पुष्ट हो जाती है त्यों त्यों नये नये विचारों को लिपिबद्ध करने की आवश्यकता बढती है । अन्य भाषाओं में पढी हुई बातें अपनी भाषा में लिखने की ज़रूरत भी पडती है । इसी दृष्टि से शब्दों का विभाजन तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी के रूप में किया जाता है । भारतीय भाषाओं के विषय में तत्सम व तद्भव शब्द संस्कृत से लिये जानेवाले शब्दों से संबन्धित माने गये हैं । 'विदेशी' का मतलब 'भारतीयेतर' से है और 'देशी' का अर्थ है देश में प्रचलित ठेठ शब्द जिनकी कोई संतोषजनक व्युत्पत्ति नहीं हो सकती । आधुनिक विद्वान तत्सम के अलावा अर्द्धतत्सम की कल्पना करते हैं । वस्तुत तत्सम, अर्द्धतत्सम और तद्भव की बात संस्कृत शब्दों के विषय में ही नहीं; विदेशी शब्दों के लिए भी इनका भेद करते हैं । किसी ज़माने में संस्कृत का अन्य भारतीय भाषाओं से जो संबन्ध या उसके आधार पर भाषा में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों को 'तत्सम' पुकारते थे । यह उस ज़माने में ठीक था । अब प्रत्येक भारतीय भाषा में अनेक अन्य प्रांतीय भाषाओं के शब्द आते हैं । अंग्रेज़ी इस देश में इतनी हिल गई है कि इसके शब्दों के बिना भारतीय भाषाओं का व्यवहार ही असंभव सा है । इसके भी तत्सम एवं तद्भव रूप हमारी प्रत्येक भाषा में मिल गये हैं । इसलिए सिर्फ़ संस्कृत पर आधारित प्रत्येक विवेचन को अब एकदम छोड देना चाहिए । अब फ्रांसीसी, पुर्तगाली आदि भाषाएँ ही भारत के लिए विदेशी कहलाने योग्य हैं ।

भाषा में शब्द-विकास की प्रक्रिया हमेशा प्रचलित है । बहती नदी नया जल बराबर लेती और किनारे की वस्तुओं को ग्रहण करती हुई आगे बढती है । यों भाषा भी बराबर नये नये विषय-क्षेत्रों से शब्दसंपत्ति लेकर अपने कलेवर को पुष्ट करती अग्रसर होती है । नदी व भाषा में यही अंतर है कि नदी कभी न कभी समुद्र को अपना जल सौंपकर खतम हो जाती है । भाषा तो बराबर विकसित होती ही रहती है । उसकी समाप्ति नहीं होती । जिस भाषा को विकसित होने की इच्छा है, शक्ति ग्रहण करने का लोभ है उसे किसी 'ननुनच' के बिना ही अन्य भाषाओं से शब्दराशि ग्रहण करनी

पडती है। जिस ज्ञानक्षेत्र में भाषा विकसित होती जाती है उसमें विकास पाने के लिए भाषा नवीन शब्दों को ग्रहण करती है।

भारत की विकासशील राष्ट्रभाषा की हैसियत से हिन्दी प्रत्येक ज्ञान-क्षेत्र में विकास पाना चाहती है। इसका शब्दकोश समृद्ध होता जाता है। राजनीति, अर्थशास्त्र आदि मानविकी विद्याओं के क्षेत्र में यह सशक्त हो रही है। विज्ञान की विभिन्न धाराओं में भी हिन्दी सशक्त माध्यम बन रही है। इस विकास में शब्दनिर्माण तथा शब्द-ग्रहण की प्रक्रिया चालू है। प्रान्त प्रान्त के विद्वान व्यक्तिगत हैसियत से ग्रन्थ-निर्माण व शब्दग्रहण करते रहते हैं। सरकारी स्रोतों के भी ऐसे प्रयास जारी हैं। हिन्दी के शब्दनिर्माण और ग्रहण की प्रक्रिया अन्य भाषाओं के लिए भी पथ-प्रदर्शक है। सभी भारतीय भाषाएँ स्वयं पुष्ट बनने के लिए प्रयत्नशील हैं। हिन्दी उन्हें भी सहायता देती है।

भाषा-विकास एवं पोषण के आधुनिक संदर्भ में हिन्दी और मलयालम की साहित्य-समीक्षा क्षेत्र की शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन करना ही इस ग्रन्थ का ध्येय है। दोनों के समान स्रोतों पर विचार हो सकता है। दोनों की तुलना हो सकती है। इस तुलना के कुछ नये सार्थक निष्कर्ष भी प्राप्त हो सकते हैं। हिन्दी और मलयालम अलग अलग न रहकर एक दूसरी से कुछ नई प्रेरणा और नयी सामग्री कैसे ग्रहण करें, यह बात भी विचारणीय है। इस अध्ययन से यह संभव है। तुलना के फलस्वरूप अधिक उपादेय शब्दों का लाभ होता है। वर्तमान शब्दों का सम्यक् अध्ययन भी किया जा सकता है। शब्दों का सम्यक् ज्ञान भी अपने में बडी उपलब्धि है।

हिन्दी और मलयालम की साहित्यिक शब्दावली

हिन्दी और मलयालम की साहित्यिक शब्दावली की तुलना के पहले यह विचारणीय है कि उक्त दोनों भाषाओं में कैसी कैसी साहित्यिक शब्दावली अब व्यवहृत है।

1. सर्वप्रथम वे शब्द आते हैं जो संस्कृत साहित्य के मौलिक और समालोचनात्मक वाङमय में रचे गये थे। उनकी विराट् राशि इन भाषाओं को उत्तराधिकार में मिली है।

2. इसके बाद संक्षिप्त रूप में ही सही, प्रांतीय भाषाओं के विकास के साथ साथ लोकसाहित्य के प्रसंग पर उत्पन्न तथा समृद्ध साहित्यिक शब्दावली का महत्वपूर्ण स्थान है।

3. इन दोनों श्रेणियों के बाद भारतीयेतर विचारधारा को प्रतिबिंबित करनेवाले अंग्रेज़ी और अन्य योरोपीय भाषाओं के शब्द आते है जिन्हें प्रस्तुत दोनों भाषाओं ने स्वीकार कर लिया है। उधार और स्वीकृति की इस प्रक्रिया में उक्त दोनों भाषाएँ विभिन्न दिशाओं में भी अग्रसरा रही है। भाषा की शब्दरचनाप्रक्रिया की विशेषता इस अन्तर क कारण है।

4. विदेशी शब्दों को सीधे उधार लेने के क्रम से असंतुष्ट पाठकों ने बाद में उनके भावों का बोध अपनी भाषा के शब्दों के ज़रिये कराने की कोशिश की। इसी के फलस्वरूप नये शब्द गढे गये हैं।

5. नये शब्दों के गठन में भाषाओं की नीति कभी समान रही तो कभी अलग अलग। इस नीति में कहीं रूढिपालन की रुचि है तो कहीं स्वच्छन्दता की इच्छा है।

शब्दस्वीकृति एवं शब्दनिर्माण की प्रमुख दिशाओं पर प्रकाश डालने के लिए उसके पहले हिन्दी तथा मलयालम की साहित्यिक शब्दावली के ऐतिहासिक विकास का संक्षिप्त वर्णन आवश्यक है। पहले संस्कृतसाहित्य को समीक्षा–शब्दावली का विकास जाता है। इसके बाद हिन्दी के रीतिकाली न समीक्षा-शास्त्र की शब्दावली आती है। इन दोनों के पश्चात् भारतीयों वाङमय पर प्रमुखत: प्रभाव डालनेवाली पश्चिमीय साहित्यिक विचारधाराअ में उल्लिखित शब्दावली का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है

संस्कृतसाहित्य की काव्य–समीक्षा

संस्कृत भाषा में रचा हुआ समीक्षा-वाङमय प्रमाणिक दृष्टि से भरतकृत नाट्यशास्त्र से प्रारंभ होता है। जगन्नाथकृत रसगंगाधर के युग तक उसकी समाप्ति मानी जा सकती है। बाद में जो भी ग्रंथ हुए हों, उन्हें टी का की कोटि में रखना अनुचित नहीं है। इस लंबी अवधि में काव्य-स्वरूप, काव्य-भेद, काव्यांग आदि पर अत्यन्त विशाल ग्रन्थ लिखे गये। गहरी परीक्षा की गई। सैकडों शब्द गढे गये। भारतमुनि के नाट्यशास्त्र को काव्य का व्याकरण कहा जा सकता है क्योंकि काव्य आदि के लिए नियम-विधान इस ग्रन्थ का विषय है। काव्य, नाट्य, रसभेद, रसांग, वृत्तियाँ आदि इसमें काव्यांग के रूप में चित्रित है। उन्हें बाद में आये हुए काव्य-शास्त्रियों ने प्राय: स्वीकार किया और उन्हीं का विस्तार अगले काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में मिलता है। इस 'शास्त्र' में प्रस्तुत नाट्यप्रवृत्तियों का उल्लेख

करना उचित है क्योंकि देश देश में होनेवाली शैलोभेद की तरफ उसमें इशारा किया गया है दक्षिणात्या, आवन्ती. अर्द्धमागधी, पाँचाली और मध्यमा। भारतीय काव्यशास्त्र में आगे चलकर अलंकारों का जो ज्वार लगा उसका प्रारंभ भी नाट्यशास्त्र में उल्लिखित उपमा, रूपक, दीपक और यमक नामक चार अलंकारों में मिलता है। 'श्लेष' से 'कान्ति' तक दस गुण और 'गूढार्थ' से 'शब्दच्युत' तक दस काव्यदोष इसी ग्रन्थ में वर्णित है।[1] ध्यान देने की बात है जो आगे चलकर इन्हीं गुणों और दोषों का भिन्न भिन्न रूप एवं दृष्टि से विवेचन किया गया। मेरी विनीत सम्मति में अगले कई काव्यशास्त्रकार कई बातों के विषय में प्रमुखतः टीकाकार ही रहे भरत का मुनित्व पाणिनि के मुनित्व के समान पाण्डित्य एवं आचार्यत्व का नामान्तर माना जाय, तो भी काफ़ी होगा।

संस्कृतकाव्यशास्त्र की मौलिकता इस बात में भी है कि इसके प्रमुख आचार्यों ने काव्य के किसी न किसी तत्व पर अपने मौलिक विचार व्यक्त किये थे। इसके फलस्वरूप काव्यशास्त्र के क्षेत्र में नये नये शब्दों का गठन हो गया है। भरत के बाद भामह ही मुख्यतः चर्चित हैं। उनके सुझाये हुए शब्दों में (1) कलाश्रित काव्य और (2) शास्त्राश्रित काव्य नामक दो भेद तथा उनके भी (1) देवादिवृत्तनिरूपक तथा (2) कल्पितवस्तुनिरूपक नामक दो अन्य भेद बताये गये है।[2] काव्य में मानवी कथा और कल्पना के स्थान पर ये शब्द ज़ोर देते हैं। रूढिपालन की कट्टरता से कवियों की चिढ भी यहाँ सूचित है। सर्गबद्ध काव्य, अभिनेय काव्य, आख्यायिका, कथा, मुक्तक एवं गाथा नामक काव्यभेद[3] रूप की दृष्टि से काव्यमात्र के विकास का प्रमाण देते हैं। प्रेयस, रसवत्, ऊर्जस्वी तथा वक्रोक्ति नामक चार अलंकारों की कल्पना एवं रसवत् अलंकार के अन्तर्गत रस का विचार नयी विचारधारा के बोधक हैं। 'रसवत्' अलंकार के ही अधीन काव्यात्मा रस को मानना बिलकुल नया सिद्धान्त है, यद्यपि वह सिद्धान्त बाद में लोकप्रिय नहीं रहा। यों वक्रोक्ति की चारुता निश्चित है और आगे पर्यायोक्त, उपह्नुति, व्याज-स्तुति, आदि जितने भी वचनभंगी पर आश्रित अलंकार हुए उन सबका आधार यही वक्रोक्ति है।[4] इस शब्द की लोकप्रियता संस्कृत काव्यशाला में आगे चलकर कुन्तकाचार्य के समय बढी तथा उन्होंने उसे काव्यात्मा तक मान

---

1. नाट्यशास्त्र 17/88,96
2. काव्यालंकार 1/17,18
3. वही 1/19,30
4. ,, 2/85

लिया। परन्तु इस शब्द में एक तरह की काव्यहीनता मालूम होती है। 'वक्र' शब्द स्वयं सौन्दर्यचेतना से विद्रोह करनेवाला शब्द लगता है। अतएव वक्र उक्ति को काव्य के चारुत्व का कारण समझना बहुत अच्छा नहीं लगता।

आचार्य दण्डी के काव्यशास्त्रीय विचारों में गुणों पर विशेष पक्षपात रहा है। इससे यही सिद्ध होता है कि दंडी के समय तक काव्य का शिल्पविधि की बारीकियों पर समीक्षकों का गहरा ध्यान गया। भाव की अपेक्षा सजावट पर ज़ोर ही इस नई प्रवृत्ति से लक्षित होता है। 'श्वित्रेणैकेन दुर्गमम्' कथन से दंडी ने गुणों का महत्व और दोषों की हानि स्पष्ट बताई है। यतिभ्रष्ट, सन्धिरहित, स्थानदोष, समयदोष आदि दोषों की व्याख्या से कवियों एवं काव्य–पाठकों की रुचि में होनेवाले परिमार्जन का पता लगता है।[1] 'यतिभ्रष्ट' एवं 'संधिरहित' दोष शब्दों के सौष्ठव को आवश्यकता का आग्रह करते हैं तो स्थानदोष और समयदोष काव्य के सामाजिक संबन्ध पर प्रकाश डालते हैं। भौगोलिक ज्ञान और ऐतिहासिक चेतना इन दोषों के विवेचन में लक्षित है।

रीतिसिद्धान्त के प्रस्तोता आचार्य वामन ने जिन काव्यशास्त्रीय शब्दों की रचना की ओर पुराने शब्दों पर विशेष ज़ोर डाला उनमें कई बडे महत्वपूर्ण है। कवियों के उन्होंने जो दो भेद बताये........अरोचकी और सतृणाभ्यवहारी[2] वे भेद आगे चलकर समीक्षाशास्त्र में अत्यंत प्रतिष्ठित हुए। उक्त दोनों शब्द समीक्षा की दो पदस्परविरोधी सिराओं के द्योतक हैं। .... अरोचकी वह जो हर बात में त्रुटि ढूँढता है और सतृणाभ्यवहारी वह है जो प्रत्ययनेयबुद्धि होकर बिना त्याज्य-ग्राह्यविवेचन के सब बातों पर सिर झुकाता है। इन दोनों के मध्यम मार्ग पर चलना हो स्वस्थ समीक्षा है। 'अरोचको' को वामन ने सच्चे अर्थों में लिया है। विवेकी अर्थात् विवेकपूर्वक गुणदोषविचिन्तन करके लिखवानेवाले कवि। इन्होंने काव्य का लोक से अधिक संबन्ध बनाये रखने पर ज़ोर दिया। इन लोक, विद्या और प्रकीर्ण को काव्यसाधन बना देने से यही सिद्ध होता है। 'विद्या' के अन्तर्गत सारे शास्त्र, दंडनीति, लक्षणज्ञता आदि आते हैं।[3] सिर्फ शब्दमाधुरी पर ध्यान देनेवाले उथले कवियों पर चोट लगाना ही शायद इनका ध्येय रहा है।[4]

---

1. काव्यदर्श 3/125,126
2. काव्यालंकार सूत्रवृत्ति 1/2/1
3. वही 1/3/3
4. वही 1/3/4

वैदर्भी, गौडी, पांचाली, आदि देशभेदाश्रित रीति पर विचार करनेवाले वामन इन रीतियों के गुणों का जो विवेचन करते हैं उससे स्पष्ट होता है कि भावों की प्रधानता, प्रसाद का निर्वाह और भाषा की प्रांजलता उत्तम काव्य के उत्तम गुण कहलाती थीं। संस्कृतसाहित्य के प्रेमियों पर छन्दोबद्ध रचना का जो मोह हावी हो चला उसी के फलस्वरूप गद्य के भेदों में 'वृत्तगंधि' का विशेष उल्लेख मिलता है।[1] छन्द बढ बढकर गद्य के क्षेत्र में घुस गया तो दंडक कहलाया। प्राचीन गद्य में दंडक सी रचना और गद्यकाव्य का सा विधान दर्शनीय है। इनका खण्डन करके सरल और चुस्त शैली के पक्ष में किसी आचार्य ने आग्रहपूर्वक नहीं लिखा। यदि दंडी आदि कोई आचार्य उसके पक्ष में दृढ मत देते तो शायद आगे के लेखक ऐसा गद्य प्रारंभ करते। इसके अभाव में गद्य जटिल रहा। वासवदत्ता आदि ग्रन्थ का गद्य गद्य की कसौटी बना। 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' की सूक्ति चल पडी। इन्होंने कवित्वशक्ति के जिन तीन अंगों का वर्णन किया है – वे हैं शक्ति, निपुणता एवं अभ्यास। काव्यरचना के लिए प्रतिभा कि आवश्यकता है। लोकशास्त्रादि के ज्ञान की जरूरत है और अभ्यास का तो अत्यंत महत्व है।[2] केवल प्रतिभा के आधार पर थोडा सा गुनगुनानेवाले कवियों को कविता चाहे कुछ कुछ आती हो पर अभ्यास से ही वह मधुर एवं गंभीर बनती है। ये तीनों शक्ति, निपुणता और अभ्यास आगे चलकर भारतीय काव्यशास्त्र के महत्वपूण शब्द साबित हुए।

ध्वन्यालोककार आनन्दवर्द्धन ने 'काव्यस्यात्मा' ध्वनिः' कहकर जिस सिद्धान्त की स्थापना करना चाहा था वह ध्वनिसिद्धान्त कहलाया। यह शब्द काव्यशास्त्र में अपने साथ कई शब्दों को जन्म दे सका। अविवक्षितावाच्यध्वनि, विवक्षितान्यपरवाच्यध्वनि, संलक्ष्यक्रम व्यंग्य, असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य आदि।[3] 'रसप्रदान' महाकाव्य एवं 'इतिवृत्तप्रधान' महाकाव्य का विभाजन[4] काव्य के प्रभाव की दृष्टि से महत्वपूर्ण और काव्यविचार में होनेवाली युगानुकूल प्रगति का बोधक है। यों गद्यविधा में प्राचीन दंडक एवं क्लिष्ट गद्यधारा से बचने की जो इच्छा नये गद्यकारों में हुई उसी के फलस्वरूप मध्य–समास गद्य, दीर्घसमासगद्य आदि अंतर गद्य में स्थापित

---

1. वही 1/3/22
2. काव्यप्रकाश 1/3
3. ध्वन्यालोक, उद्योत 2
4. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा पृ० 87

हुआ । ध्वन्यालोककार ने 'औचित्य' शब्द की भी ज़ोर से घोषणा की थी ।[1] बाद में उस शब्द का विकास काव्य की आत्मा की दशा तक पहुँचा। भारतीय काव्यशास्त्र की संसार के काव्यशात्त्र को सबसे बडी देन के रूप में औचित्य का उल्लेख किया जा सकता है ।

ध्वन्यालोक के प्रशस्त व्याख्याकार अभिनवगुप्त ने कई नये नये शब्द समीक्षा-क्षेत्र में गढे हैं । काव्य-फल के रूप में व्युत्पत्ति और 'प्रीति' शब्द काव्य के ज्ञानपक्ष तथा आनन्दपक्ष का बोध कराते हैं ।[2] रसनिष्पत्ति की विशद व्याख्या में इन्होंने भट्टलोल्लट आदि आचार्यों के मतों का वर्णन करते हुए अनेक नये शब्द दिये हैं । चित्तवृत्ति, उपचय, अनुसंधान, अनुकर्ता, अनुकार्य, साधा-रणीकरण भावकत्व,भोजकत्व,द्योतन, रसन, संवेदन,रसचर्वणा आदि । काव्य की रसोद्दीप्ति में होनेवाली इन सूक्ष्म प्रक्रियाओं का वर्णन सहृदय की विभिन्न दृष्टियों का प्रमाण है । यों 'रचना' के क्षेत्र में 'वर्णमैत्री' तथा 'संघटना' दोनों शब्द कलापक्ष के दो महत्वपूर्ण पहलुओं के परिचायक हैं ।[3] परस्पर मिलते उचित वर्णों का विन्यास प्रत्येक पंक्ति को हृदयहारी बनाता है तो 'संघटना' शब्द शब्दावली के गठन की रोचकता पर ज़ोर देता है ।

अब तक संस्कृत के जितने समीक्षकों की चर्चा हुई वे काव्य–रूप तक ही बढे थे । राजशेखर से तो समीक्षकों का एक नया युग प्रारंभ होता है जो साहित्य के सामाजिक संबन्ध पर अधिक प्रकाश डालते अनुभव होते हैं । जहाँ पहले काव्य या साहित्य का क्षेत्र काव्य तक ही संकुचित रहा वहाँ राजशेखर ने साहित्य के अनेक सामाजिक स्रोतों का वर्णन किया है । इतिहास, पुराण, मोमांसा, तर्कशास्त्र, अर्थशास्त्र, नाट्यशास्त्र, कामशास्त, व्यावहारिक वृत्त, विरचना. आयुर्वेद ज्योतिष आदि । राजशेखर के युग तक बढते जाते काव्यायाम का ही संकेत इस प्रसंग पर मिलता है । काव्य की विविध विशेषताओं और प्रवृत्तियों के आधार पर कई भेद किये गये हैं......सारस्वत कवि, आभ्यासिक कवि, शास्त्र-कवि, उभयकवि, शब्दकवि, अर्थकवि, अलं-कारकवि, शास्त्रार्थकवि, आदि । काव्य के हर एक अंग पर जोर के अनुसार विविन्न कविभेदों का उल्लेख होता है ।[4] यहाँ राजशेखर काव्य के किसी अंग को आत्मा मानने के बदले अलग अलग अंग को काव्य माननेवालों के भिन्न

---

1. ध्वन्यालोक 3/8
2. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा पृ. 115.
3. वही पृ. 127.
4. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा पृ. 147-148

मतों का स्वागत करने तैयार हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि खास खास काव्यसिद्धान्त पर दृढ रहने की संकुचित दृष्टि अब समाप्त सी हो चली

काव्य–मात्र में भावों के विवेचन की प्रक्रिया में रस-व्यंजना की स्थिति पर सोचते हुए राजशेखर ने अनेक पाकों का उल्लेख किया है। किसी भी ग्रन्थ में शुरू के अन्त तक रस के निर्वाह का प्रयास ही पाक की कसौटी है।[1] सरस–विरस, विरस–सरस आदि का विभाग, पिचुमन्द–पाक बदरपाक, मृद्वीकपाक, तिन्तिडीक पाक, द्राक्षापाक, नारिकेलपाक आदि पाकों का निर्णायक है। ये कृतित्व-समीक्षा की गहरी छान-बीन के परिचायक शब्द है। इतनी गहराइयों में पैठने का प्रयास आगे के लोगों ने नहीं किया। इसे उन्होंने शायद बाल की खाल खींचना भी माना था। अतएव काव्यमीमांसा में प्रयुक्त अनेक शब्द आगे अधिक अप्रचलित ही रह गये। उत्तम काव्य की उपादेयता और साधारण काव्य की अनुपादेयता का विवेचन करके राजशेखर कवि ने जो घोषित किया 'वरमकवि: किन्तु न कुकवि:' वह उनकी आलोचना-प्रवीणता का परम प्रमाण है।

नाट्यशास्त्र के बाद दशरूपक ही नाटक और उसके भेद–अंग आदि का विशद विवेचन करता है। नाट्यशास्त्र–संबन्धी संकेतित शब्दों की लंबी सूची दशरूपक की भी देन हैं। 'अलंकार' के रूप में वक्रोक्ति का वर्णन भामह आदि ने पहले ही अवश्य किया था किन्तु काव्यात्मा के तौर पर वक्रोक्ति या वचनचारुता की स्थापना नवीन मत है। वक्रता या चारुता को काव्यात्मा की अकेली कसौटी मानने पर काव्य के प्रत्येक अंग की चारुता का अलग अलग विचार आवश्यक हो जाता है। वर्ण, पद, विशेषण, वाक्य, प्रबन्ध आदि प्रत्येक पहलू के चमत्कार का आग्रह करनेवाली यह व्याख्या विशेष रोचक रही है। आधुनिक समीक्षक इसी वक्रोक्ति की अभिव्यंजनावाद से तुलना किया करते हैं।

भोजराज ने अपने सरस्वती कंठाभरण में अध्येय वाङमय के जो कई भेद दिये हैं।[2]....काव्य, शास्त्र, इतिहास, काव्यशास्त्र. काव्येतिहास, शास्त्रातिहास आदि ...उन शब्दों से साहित्यिक समालोचना के विकासशील आयाम स्पष्ट होते हैं। इस साहित्य पर साहित्येतर प्रभाव का प्रमाण मानना भी अनुचित नहीं है।

---

1. वही पृ. 167.
2. सरस्वतीकण्ठाभरणम् 2/139

'औचित्य' शब्द का उल्लेख भर आनन्दवर्धन ने किया है। क्षेमेन्द्र ने इसे काव्यात्मा तक घोषित कर दिया।[1] पद, वाक्य आदि 27 प्रकार के औचित्यों की चर्चा बढते काव्यविस्तार का प्रमाण है।[2]

मम्मटकृत 'काव्यप्रकाश' संस्कृत का प्रशस्ततम काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। हिन्दी के रीतिकालीन आचार्य कवियों ने काव्यप्रकाश से काफ़ी सामग्री ग्रहण भी की है। तथापि काव्यप्रकाश ज़्यादातर परिचयात्मक प्रौढ ग्रन्थ की ही कोटि में आने योग्य है। उनकी 'चित्रकाव्यविवेचना' समीक्षा के क्षेत्र की मार्मिक बात कहला सकती है। खाली शब्दचमत्कार को काव्य-मर्म समझनेवालों को मम्मट ने चित्रकाव्य की आलोचना की चुनौती दी है।[3]

अनन्तर पी ढि पर प्रभाव एवं परिचयात्मकता की दृष्टि से साहित्य-दर्पण का भी महत्व कम नहीं पडता। साहित्यदर्पण के युग तक गद्य का पर्याप्त विकास परिलक्षित होता हैं। मुक्तक, वृत्तगंधि, उत्कलिकाप्राय और चूर्णक जैसे भेदों की व्याख्या यही प्रमाणित करती है।[4] 'विरुद्ध' तथा 'करंभक' को चर्चा तो काव्य को अन्य विकासशील दिशाओं का स्मरण कराती है।[5] साहित्यदर्पण के युग तक राजाश्रय में अनेक कवियों के आ जाने का प्रभाव हो इससे प्राप्त होता है।

रसगंगाधरकार साहित्यदर्पणकार की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक आचार्य तो थे। किन्तु जगन्नाथ पण्डित ने काव्यभेद एवं ध्वनिभेद आदि पर हो अपनी व्याख्या बताने में अधिक समय बिता दिया था। जगन्नाथपण्डित की मौलिक उक्तियों में उनकी बताई काव्याख्या मुख्य है...'रमणीयार्थप्रति-पादक: शब्द: काव्यम्'।

रीतिकालीन काव्यसमीक्षा

हिन्दा साहित्य में काव्य-शास्त्र का स्वतंत्र विकास रीतिकाल में हुआ। काव्यशास्त्र के ही कारण इस युग का नामकरण रीतिकाल किया गया। रीति-लक्ष्यलक्षणग्रन्थरीति। आलोच्ययुग में जो काव्य लिखा गया वह लक्ष्य-

---

1. औचित्यविचारचर्चा 5
2. वही 8,9,10
3. काव्यप्रकाश 1/5
4. सात्यिदपंण 6/330, 331
5. वही 6/337

लक्षणग्रन्थ के ही रूप का रहा। 'लक्ष्य–लक्षणग्रन्थ' शब्द से ही स्पष्ट है कि काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ का स्वरूप क्या था। काव्यशास्त्र के पंडित आचार्यों के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए हिन्दी साहित्य के बृहद् इतिहास (रीतिकाव्य) के प्रसक्त प्रकरण पर लेखक ने आचार्यों के तीन भेद भाने हैं। (1) उद्भावक अर्थात् काव्यशास्त्र के किसी न किसी अंग से संबन्धित नये सिद्धान्त सूत्रों का आविष्कार करनेवाले तत्वदृष्टा ऋषिकल्प आचार्य– जैसे भामह आदि। (2) व्याख्याता–काव्य शास्त्र के लिखे ग्रन्थों पर अधिक प्रकाश डालनेवाले–नये अर्थरत्न ढूँढ निकालनेवाले व्याख्याता विद्वान जो स्वयं नये सिद्धान्तों की स्थापना तक करते है+जैसे अभिनवगुप्त, अप्पय्यदीक्षित आदि। (3) परिचयलेखक–काव्यांगों में किसी एक का निश्चित उदाहरण व लक्षण का परिचय अपने शब्दों या छन्दों में प्रस्तुत करके बालानां सुखबोध ही अपना परम धर्म समझे हैं। किसी नये तत्व या उद्भावना की कोई गुंजाइश ऐसे ग्रन्थों में नहीं है। प्रतापरुद्रीय इसका उदाहरण है। काव्यांगों के स्पष्टीकरण के लिए ये शास्त्रकार परिचयात्मक प्रणालीं अपनाये हुए हैं। उद्भावक, व्याख्याता और परिचायक आचार्यों में रीतिकालीन आचार्य तीसरी कोटि में आते हैं। परिचय का कार्य गहरी व्याख्या नहीं माँगता। उदाहरणादि से बातों को शीघ्र स्पष्ट करना ही उनका लक्ष्य होता है। इस दष्टि से ही सही, जिन ग्रन्थों का निर्माण रीतिकाल में किया गया उन पर शब्दजाल की दष्टि से प्रकाश डालना उपयोगी है।

रीतिकालीन रीतिविषयक ग्रन्थों के विषय में सर्वप्रथम उल्लेखनीय बात यह है कि ये नब्बे प्रतिशत संस्कृत काव्यशास्त्र के रूपान्तर ही है। इन ग्रन्थों की तीन वर्गों में विभक्त किया गया है- रसविषयक, अलंकारविषयक एवं विविधकाव्यांगविषयक। इनमें रसविषयक ग्रन्थ अधिकांशतः शृंगाररस की सामग्री से ही पूर्ण हैं। इन ग्रन्थों के मुकाबिले में अलंकारग्रन्थों की संख्या कम हैं। विविध अन्य काव्यांगों का निरूपण करनेवाले ग्रन्थ तो और भी कम हैं।

रसविषयक काव्यसमीक्षक ग्रन्थों के रचयिताओं में प्रमुख केशवदास हैं। इनकी रसिकप्रिया मुख्यतः शृंगाररस से संबद्ध है जिसके 16 प्रकाशों के 13 प्रकाशों में इस रस का संगोपांग निरूपण है। शृंगार-रस-विचार में इन्होंने नायक-नायिका के भेद को विशेष महत्व दिया। कामशास्त्राधिष्ठित नायिकाभेदों का खासकर उल्लेख भी किया है। उक्त नायिकाभेदों में मुख्य है...पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी, हस्तिनी, मुग्धा, मध्यमा, प्रौढा। मुग्धा

नायिका के कई उपभेद भी हैं। नवल वधू, नवल अनंगा तथा लज्जाप्राप्तरति। इन सब भेदों का आधार संस्कृत के विविध ग्रन्थों में पाया जाता है।[1] शृंगारस को रस-नायक सिद्ध करने का केशवदास का प्रयास[2] नवीन एवं मौलिक सा है यद्यपि इसे प्रामाणिकता प्राप्त नहीं है। इस नवीन स्थापना के, प्रयास में भी केशवदास ने कुछ नवीन संकेतित शब्द नहीं गढे है। केशव की कविप्रियों में जो विभजन-विचार मिलते है। उनके आधारों में 'काव्यकलपलतावृत्ति' एवं 'अलंकारशेखर' प्रमुख कहलाये हैं।[3] केशव के गिनाए तेईस काव्यदोषा में अंध, बधिर, पंगु, नग्न तथा मृतक मौलिक माने गये हैं। उन्होंने 'अनरस' नामक काव्यदोष की चर्चा की है जो हैं, प्रत्यनीक, विरस, दुःसंधान और पात्रादुष्ट। इनका भी आधार संस्कृत काव्यशास्त्र में देखा गया है। केशवदास ने अलंकारों के दो भेद माने है....'साधारण' और 'विशिष्ट'। साधारण के चार भेद है....वर्ण, वर्ण्य, भूश्री, राजश्री। विशिष्ट अलंकार हैं अन्य अलंकारग्रन्थों में चर्चित सामान्य अलंकार। संक्षेप में बात यह है कि केशवदास ने मौलिक रूप से बहुत कम समीक्षा-शब्द ही दिये हैं।

चिंतामणि अन्य आचार्य कवि थे। उनके उपलब्ध ग्रन्थ कविकुल-कल्पतरु और पिंगल है। कविकुलकल्पतरु में संस्कृत काव्यशास्त्र की प्रणाली पर काव्यभेद, काव्यस्वरूप, अलंकार, दोष, शब्दार्थ - ध्वनि आदि का ही निरूपण है। संस्कृत ग्रन्थों की तुलना करके दिखाया गया है[4] कि भिन्न भिन्न आचार्यों से विषयग्रहण हुआ है। परन्तु इन्होंने कहीं कहीं प्राचीन आचार्यों के मत से अपने भिन्न मत को अवश्य प्रकट किया है। चूंकि इन्होंने संस्कृत में लिखित काव्यशास्त्र को ही पूरा पूरा प्रमाण स्वीकार किया है, अतएव नई बातों की गुंजाइश नहीं रही है।

आगे कुलपति मिश्र का नाम आता है। इनका काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ रसरहस्य है। इस रहस्य में कुलपति के जो विचार है वे कुछ अंश में मौलिक जरूर है। परन्तु काव्यशास्त्रीय शब्दावली की दृष्टि से कोई उल्लेखनीय नूतनता नहो है। पदुमनदासकृत काव्यमंजरी में तीन प्रकार के कविसंप्रदायों का निरूपण है (1) असत् निबन्ध अर्थात् मिथ्या का सत्य रूप में वर्णन (2) सत अनिबन्ध–अर्थात् सत्य का वर्णन जानबूझकर न करना (3) कविनियमनिबन्ध

---

(1) हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास पृ 304

(2) रसिकप्रिया

(3) वही पृ. 306

अर्थात् कविसमय के नियमों से चालित। यह विभाजन मौलिक एवं तर्कसंगत है। तथापि कोई ठोस नवीन शब्दावली इस ग्रन्थ में नहीं मिलती।

देव रीतिकाल के अत्यधिक प्रशस्त कवि थे। उन्होंने कई काव्य-शास्त्रीय ग्रन्थ लिखे। शब्दरसायन, भावविलास, भवानीविलास, प्रेमतरंग आदि। शब्दरसायन में विविध काव्यांगों का निरूपण है। काव्यस्वरूप, शब्दशक्ति,, रस, नायक-नायिका-भेद, गुण, वृत्ति, अलंकार और पिंगल। इनके मुख्य आधार संस्कृत के काव्यशात्रीय ग्रन्थ हैं। देव ने नई बातें भी सुनाई अवश्य हैं। नायक-नायिकाभेद इनका प्रिय क्षेत्र रहा और इन्होंने इसका अत्यधिक विस्तार किया है। (1) देवने कई रस–दोषों का भी उल्लेख किया है। ये भी संस्कृतकाव्यशास्त्र के क्रम से नहीं हटते।

रीतिकालीन आचार्य कवियों में भिखारीमदास का विशेष स्थान हैं। उनके काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ तीन है। रससारांश, काव्यनिर्णय और शृंगार-निर्णय रससारांश और श्रृंगारनिर्णय मूलतः रस तथा नायकनायिकाभेदविषयक ग्रन्थ हैं तथा काव्यनिर्णय विविधांगनिरूपक है। प्रथम दोनों ग्रन्थ पूर्ण रूप से संस्कृतकाव्यशास्त्र के ही पथ पर चलते हैं। भिखारी-दासकृत काव्यनिर्णय में भी प्राचीन क्रम से ही काव्यकारण, काव्य प्रयोजन, काव्यांग,शब्दशक्ति, अलंकार, रसभाव आदि का वर्णन है। जो नवीन अंश है वह है 'तुकवर्णन'। इसका नायक-नायिकाभेदप्रकरण काफी विस्तृत रहा है। भिखारीदास ने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों का निर्माण करते हुए हिन्दी भाषा का आदर्श सामने रखा,यह विशेषता उल्लेखनीय है। इनकी कुछ मौलिक उद्भावनाएँ भी हैं/ परन्तु इन्हें प्रमाणिकता नहीं मिली है। वे भी प्राचीन काव्यशास्त्र के पथ पर ही चले हैं। प्रतापसाहि की दो उपलब्ध काव्यशास्त्रीय रचनाएँ है... काव्य-विलास और व्यंग्यार्थकौमुदी। व्यंग्यार्थकौमुदी का मूल प्रतिपाद्य नायक-नायिकाभेद ही है। नायिकाविभाजन में एकाध छोटे मोटे भेदों का उल्लेख प्रतापसाहि ने किया है। पर ये संस्कृत के ही पथ के आधार पर बने हैं। काव्यविलास भी इसी दिशा का अन्य काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। विभाजन की परिचयात्मक प्रणाली से ही ग्रन्थकार का विशेष तात्पर्य है।

विविधकाव्यांगविषयक ग्रन्थों के रीतिकालीन लेखकों में ग्वालकवि भी महत्व रखते है। उनके 'रसरंग' और 'अलकरणभ्रमभंजन' दोनों ग्रन्थों के आधार पर बताया गया है कि आपने संस्कृत के आचार्यों की आलोचना साहसपूर्वक की है। दोनों ग्रन्थ रस एवं अलंकार की ही चर्चा करते हैं। वे किसी नई दिशा का उद्घाटन नहीं करते।

---

(1) हि. सा. का बृ. इ. पृ. 314

रीति आचार्यों का योगदान

जहाँ संस्कृत के आचार्यों ने प्राय: आचार्यत्व और कविकर्म को पृथक रखा था वहाँ हिन्दी के आचार्यों दोनों को मिला दिया। इससे काव्य की वृद्धि तो निश्चित ही हुई। किन्तु काव्यशास्त्र का विकास न हो सका। जब काव्यशास्त्र का स्वतंत्र विकास न हो तब स्वतंत्र समीक्षाशास्त्रीय शब्दावली की बात ही नहीं उठती।

आधुनिक पश्चिमी साहित्यिक प्रवृत्तियाँ और उनका प्रभाव

आधुनिक युग में अंग्रेज़ी भाषा के ज़रिये पश्चिमी आलोचना का गहरा प्रभाव हिन्दी व मलयालम दोनों के साहित्य पर पडा है। यह इतना व्यापक है कि इसका संक्षेप करना कठिन है। हम यहाँ प्रमुख पश्चिमी विचारों की प्रतिनिधि धाराओं का ही उल्लेख करेंगे और उनकी प्रतिपादक शब्दावली की सरसरी परीक्षा करेंगे।

काव्य-क्षेत्र में सबसे व्यापक धारा रोमांटिक है। पश्चिमी 'रोमांटिसिस्स' का सिद्धान्त भारतीय साहित्य पर विशेष प्रभाव डाल सका है। इसका जो भौगोलिक एवं ऐतिहासिक परिवेश इग्लंड में था वह न हिन्दी प्रदेश में रहा है न केरल में। उस धारा में पुरानी नियमित धारा को तोडने की प्रवृत्ति थी, जो स्वतंत्रता, स्वच्छन्दता की प्रवृत्ति थी उन दोनों के अस्तित्व ने ही यहाँ की रोमांटिक काव्यधारा को 'रोमांटिक' नाम दिलाया। इस नवीनता के कारण हिन्दी समीक्षकों ने इसके लिए 'स्वच्छन्दतावाद' शब्द स्वीकार किया। यह शब्द अब खूब प्रचलित है। मलयालम के कवियों और विचारकों पर 'रोमांटिसिस्म' शब्दों के पश्चिमी वातावरण का प्रभाव ज़्यादा पडा था। अतएव उन्होंने उसी अंग्रेज़ी शब्द का व्यवहार मलयालम में भी किया। 'रोमांटिक' और 'रोमांटिसिस्म' अब मलयालम के लोकप्रिय शब्द हैं। अब सोचना चाहिए कि क्या हिन्दी का 'स्वच्छन्दतावाद' शब्द मलयालम और अन्य भाषाओं में 'रोमांटिसिस्म' की जगह प्रयुक्त नहीं हो सकता? यद्यपि साहित्यप्रेमी अन्य साहित्यपाठकों एवं समीक्षकों को अंग्रेज़ी में परिचित बता सकते हैं, तथापि ऐसे पाठक कम हैं। अंग्रेज़ी शब्दों की भाव-राशि, भूमिका एवं वातावरण भारतीय भाषाओं के क्षेत्र में जोड़ना ठीक भी नहीं है। उचित शब्द गढने की समस्या ही सचमुच अब तक बाधक रही। 'स्वच्छन्दतावाद' सुन्दर शब्द है जो सभी भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त हो सकता है।

'रोमांटिसिस्म के सिलसिले में भारतीय भाषाओं में कई अन्य वाद संक्रान्त हुए हैं। मिस्टिसिस्म, सिंबोलिसम, एस्केपिसम, लिबरलिसम, ह्यूमनिसम आदि। पश्चिमी विचारधारा से अतिशय प्रभावित होकर हम प्राय: समझ बैठते हैं की परिचय की प्रवृत्ति को किसी न किसी रूप में यहाँ भी प्रवृत्त प्रमाणित कर सकें तो उससे हमारी भाषाओं का सम्मान बढेगा। यह धारणा बडी स्वस्थ नहीं कहला सकती। इन पश्चिमी धाराओं में प्रत्येक के मूल में कुछ बुनियादी तत्व होते हैं जिनका मानवमन से संबन्ध है। उन्हींको हम भारतीय साहित्य के प्रेम। मुख्यत: स्वीकार करते हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में इनका विचार जब किया जाता है तब हम पश्चिम की पृथ्वी की गंध यहाँ ला नहीं सकते। जब इन पश्चिमी शब्दों के सामान्य भाव से ही हमारा मतलब है तब यही उचित है कि इनके भाव का बोध करानेवाले भारतीय शब्दों की रचना हो। रहस्यवाद, प्रतीकवाद, पलायनवाद, उदारवाद, मानवतावाद आदि उपर्युक्त मिस्टिसिस्म आदि शब्दों के लिए पर्यायवाची के रूप में हिन्दी प्रयुक्त हैं।

पश्चिमी काव्यप्रवृत्तियाँ भारत में भी लोकप्रिय हो गईं तो उनके समर्थक तथा अनुगामी बडी संख्या में भारत में भी हुए। इस नई परिस्थिति में हमें विचार करना है कि इसका भारतीयकरण हो जाय और अब इसे पूर्णत: भारतीय बना लें। विभिन्न भारतीय भाषाओं में इनका विकास न्यूनधिक मात्रा में हुआ है और कुछ कुछ भिन्न भिन्न रूप में। हमारे साहित्यजगत में प्राचीनता का समर्थन करने की भी एक आधुनिक प्रवृत्ति उपलब्ध है जो प्रत्येक नई प्रवृत्ति को भी, प्राचीनता का रूपान्तर प्रमाणित करने पर तुली हुई है। इसी प्रवृत्ति से शोध के क्षेत्र में कई आधुनिक प्रवृत्तियों को प्राचीनतम युग तक ले चलने का दुराग्रह कोई कोई करते हैं। मूलत: जब पश्चिमी सिद्धान्त और वाद भारतीय वातावरण के प्रभाव से कुछ भारतीय से हो गये हैं तब उनके भारतीय शब्द ही अधिक उपयुक्त हैं। इससे उसका स्वतंत्र विकास भी संभव हैं। हाँ, यह भी हो सकता है कि किसी 'वाद' का जितना विकास एक भारतीय भाषा में हो उतना अन्य भारतीय भाषा में न हो। उदा०— मिस्टिसिस्म, सिंबोलिसम आदि का विबिध भारतीय भाषाओं में जो विकास हुआ है वह यही प्रमाणित करता है। मलयालम तथा हिन्दी के विषय में स्थिति यह है कि मलयालम ने सिर्फ थोडे से वादों को गंभीर रूप में स्वीकार किया है। उनके अंग्रेज़ी नाम ही उन्होंने पसन्द किए हैं। हिन्दी ने कई वाद स्वीकार किए हैं। और हिन्दी नाम गढ लिये है। मलयालम की विकासशील समीक्षा के लिए यह उपादेय ही लगता है कि वह इन भारतीय नामों को स्वीकार करे और तदनुसार वादों का परिमार्जित रूप अपनी अपनी भाषा में चलावें। इस दृष्टि से स्वच्छन्दता-

वादम्, रहस्यवादम्, प्रतीकवादम्, पलायनवादम्, उदारवादम् तथा मानवता-वादम् अच्छे शब्द है ।

सामाजिक क्रांति की चेतना से प्रभावित नये विचार जो पश्चिम से भारत आये तो उसका नामकरण प्रोग्रसीविस्म हुआ । इसका राजनीतिक और आर्थिक पहलुओं के आधार पर काफी विकास हुआ । साहित्य का इस नई दिशा में विकास इन विचारधराओं की विशिष्ट देन है । इसके विविध पहलुओं से संबन्धित अनेक शब्द गढे गये हैं । मार्क्सिसम्, रियलिसम्, प्रोलिटेरियनिसम्, सौष्यलिसम्, फ्यूडलिसम् आदि । इनमें कुछ आर्थिक क्षेत्र से संबन्धित सामान्य शब्द हैं । शेष तो रूस आदि खास खास राष्ट्रों की विशेष परिस्थिति से संबन्धित हैं । राष्ट्रों की विशेष परिस्थिति से संबन्धित अर्थ उनके बाहर उसी अर्थ में प्रयुक्त नहीं हो सकते । ऐसे शब्दों की संगति नहीं बैठती । लेकिन अब वामपन्थी राजनैतिक और आर्थिक विचारों का विकास संसार के अनेकों राष्ट्रों में छा गया है । इसलिए न्यूना-धिक मात्रा में यूरोपीय संदर्भ के अर्थ में ही विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यों में भी इन शब्दों का प्रयोग संभव है । तब तो इन अर्थों में अंग्रेज़ी शब्द ही काम में लाये जायँ, यह अनिवार्य नहीं । भारतीय शब्द अधिक सार्थक लग सकते हैं । मलयालम साहित्य में इन के यूरोपीय परिवेश को छोडे बिना अंग्रेज़ी शब्दों के साथ मलयालम प्रत्यय जोडकर काम में लाया जाता है । किन्तु हिन्दी में एक मार्क्सवाद को छोडकर शेष सारे शब्दों के लिए हिन्दी पर्यायवाची शब्द गढे गये हैं मार्क्सवाद, यथार्थवाद, सर्वहारावाद, समाजवाद, समाजवादी यथार्थवाद, सामन्तवाद आदि ।

भारतीय भाषाओं के साहित्य पर जो पश्चिमी सिद्धान्त प्रभाव डाल सके हैं उनमें मनोविज्ञान के सिद्धान्त प्रमुख हैं । यह अत्यंत व्यापक क्षेत्र है । इसके अंग–उपांग के रूप में अनेक वस्तुओं-सिद्धान्तों का विकास हुआ है और मनोवैज्ञानिक समीक्षा के आयाम चारों दिशाओं में फैले हैं । हिन्दी के विषय में यह प्रयोगवाद,नई कविता और अद्यतन काव्यप्रवृत्ति के क्षेत्र तक बढी है । अन्य सिद्धान्तों की तुलना में मनोवैज्ञानिक शब्द अधिक जटिल और संकेतित भी हैं । इसलिए भारतीय साहित्य में इस क्षेत्र के अनेक अंग्रेज़ी शब्दों को ज्यों का त्यों बिना अनूदित किए ही स्वीकार किया जाता है । वस्तुतः मनोविज्ञान की विज्ञानता ही इस विशेषता का कारण है । हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी और सृजनशील साहित्यकार मनोविज्ञान के इतने श्रद्धालु हो गये हैं कि हिन्दी वाङमय में मनोवैज्ञानिक शब्दावली की भरमार है । इतना तो मलयालम वाङमय में अभी नहीं मिलता । मनोवैज्ञानिक विषयों से चिर

परिचय के कारण हिन्दी में ऐसे शब्दों के अनूदित रूप काफी मात्रा में मिलते हैं। मलयालम में अंग्रेज़ी शब्दों का ही व्यवहार है। आगे भाषागत एकता की दृष्टि से हिन्दी में प्रयुक्त संकेतित पदावली को मलयालम में उसकी प्रकृति के अनुसार परिवर्धित परिवर्तित कर काम में लावें तो लाभ ही होगा हिन्दी की ऐसी नवनिर्मित शब्दावली का आधार संस्कृत ही है। अतएव अपूर्णता या अर्थभ्रष्टता की बात भी नहीं आ सकती।

आधुनिक साहित्यप्रवृत्तियों का संबन्ध राजनैतिक तथा दार्शनिक बातों से है। इनका यूरोपीय बौद्धिक जीवन से संबन्ध होने के कारण समसामयिक वर्तमान साहित्यिक शब्दावली, प्रान्त या देशविशेष तक सीमित न रहकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर की ही होती है। इन अंतर्राष्ट्रीय विचारों का विकास अलग अलग देश के विचारों का योगदान है। उनकी अपनी अपनी भाषा में ही इन शब्दों का प्रथम प्रयोग हुआ करता है। बाद में अन्य भाषा-भाषी अपनी भाषा के अनुकूल इन शब्दों का अनुवाद कर लेते हैं। अतएव इस तरह के सारे शब्दों के अंग्रेज़ी शब्द लिखना अनावश्यक है। भारतीय भाषाओं की आत्मा के अनुरूप इनका अनुवाद करना तो उचित है; आवश्यक भी है। यदि हिन्दी और मलयालम दोनों के लिए स्वीकृत शब्दावली अनुवाद के ज़रिये गढी जा सके तो दोनों भाषाएँ लाभान्वित हो जायेंगी।

यहाँ हमने केवल काव्यक्षेत्र को लेकर अपने वक्तव्य का समर्थन किया हैं। काव्य सिर्फ एक उदाहरण ही हैं। नाटक, एकांकी, कहानी, उपन्यास आदि अन्य धाराएँ भी इस प्रकार की हैं। अर्थात् हिन्दी और मलयालम के नाटक आदि का प्रारंभिक स्वरूप संस्कृतसाहित्य में ही मिलता है। ठेठ मौलिक रूप में हिन्दी के या मलयालम के नाटकविषयक समीक्षाप्रधान शब्द दुर्लभ हैं। आधुनिक युग में अंग्रेज़ी और अन्य भाषाओं में प्रस्तुत साहित्य ने हिन्दी को पर्याप्त प्रेरणा दी है, प्रभावित किया है। अतएव उनसे हिन्दी और मलयालम ने शब्द भी ग्रहण किये। बहुत से अंग्रेज़ी शब्द ज्यों का त्यों लिये गये है। अनुवाद की प्रवृत्ति भी प्रबल रही है। जैसे-नाटक-एकांकी, गीतिनाट्य, संकलन–त्रय. चरित्रचित्रण, चरम सीमा, बिंदु, ध्वनिरूपक, एकपात्रीय नाटक, पुत्तलिकानृत्य, त्रासदी, कामदी, समस्यानाटक, संवाद। उपन्यास–वातावरण, जनवादी, अन्त: संघर्ष, आदर्शवादी उपाख्यान, ऐतिहासिक उपन्यास, जातीयता, जीवनसत्य, धारावाही, नवजागरण. प्रस्तावना, परिवेश। कहानी–गल्प, पूँजीपति, प्रभविष्णुता, यंत्रीकरण, पतवार। अन्य–आलोचना, आयाम, जीवन-चरित, आत्मकथा, रेखाचित्र, दृष्टान्त-कथा, नयासाहित्य, नीतिसत्य, पक्षधर साहित्य, पत्रकारिता, प्रकृतवाद. पात्रानुसंधान, पूर्वग्रह, परिप्रेक्ष्य, प्रतिमान, यात्रासाहित्य।

मलयालम की साहित्यिक शब्दावली

मलयालम की साहित्यिक शब्दावली के अध्ययन के पहले इस भाषा के शब्दकोष से संबन्धित थोडी विशेषताओं पर प्रकाश डालना अनिवार्य है। यह द्राविडी भाषा छोटे से क्षेत्र में व्यवहृत होने पर भी स्थानगत एवं जातिगत अन्तर के आधार पर अनेक भेदोपभेद बोलचाल में रखती है। इस भाषा के विषय में यह प्रसिद्ध कथन तथ्य निकलता है कि कोस कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी। मलयालम की यह बोलीविषयक विलक्षणता अभी तक बनी है। साहित्य के क्षेत्र में भी बोलीगत विलक्षणता लोकगीत की धारा में अवश्य अनुभव होती है। सामान्यत: कहा जा सकता है कि प्राचीन एवं लोकगीताश्रित रचनाएं तमिल–मिश्रित या ठेठ मलयालम भाषा में लिखी गई थीं। परन्तु केरल की जनता और उनके वाङमय पर संस्कृत भाषा तथा साहित्य का ऐसा व्यापक प्रभाव पडा है कि किसी भी गंभीर विवेचना में इस प्रभाव का उल्लेख किये बिना रहना असंभव है।

काव्यशास्त्र के क्षेत्र में हिन्दी कई शताब्दियों के पहले ही सक्रिय रही थी। उन दिनों की कविप्रथा के अनुसार ऐसे ग्रन्थ पद्यात्मक अवश्य थे। लेकिन मलयालम के कवियों ने शताब्दियों तक काव्यशास्त्र-रचना की ओर ध्यान नहीं दिया। उन्हें इस विषय की रुचि ही शायद नहीं थी। 'लीलातिलकम्' ही इस प्रवृत्ति का एकमात्र अपवाद है जो संस्कृत शैली में लिखा गया है। इस बहुचर्चित काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ के रचनाकाल एवं कर्तृत्व के विषय में अभी शास्त्रार्थ चल रहा है। जो केरलीय काव्यशास्त्र के विषय में उत्सुक थे उन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र का पठन-पाठन किया। दूसरे केवल काव्यानन्द से संतुष्ट थे।

मलयालम साहित्य की उपर्युक्त प्रवृत्ति के कारण इसमें साहित्यालोचन का शुद्ध प्रयास आधुनिक युग में ही प्रारंभ होता है। आधुनिक मलयालम समालोचना की भूमिका के तौर पर हमें यहाँ की साहित्याध्ययन–परंपरा के बारे में दो चार बातें समझनी हैं। प्राय: केरलीय संस्कृत छात्र माघ तक के अध्ययन से संस्कृत की शिक्षा पूरी कर लेते थे। कुछ नाटक भी पढे जाते थे। जो काव्यशास्त्र का कुतूहल रखते थे वे क्रमश: चन्द्रालोक, कुवलयानन्द, काव्यादर्श, काव्यप्रकाश और साहित्यदर्पण पढते थे। रसगंगाधर एवं ध्वन्यालोक भी थोडा बहुत लोकप्रिय रहे। किन्तु इनका अध्ययन करनेवालों की संख्या छोटी होती थी। परन्तु अन्य प्रान्तों को तरह केरल में भी शास्त्राध्ययन के रूप में व्याकरण, न्याय, वेदान्त और ज्योतिष का अध्ययन

किया जाता था। साहित्यशास्त्र को शास्त्र माननेवाले कम थे। कुवलयानन्द आदि काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों का अध्ययन जिन्होंने किया वे काव्यविवेचन, अलंकार, रस आदि का विवेचन भी करते थे। वस्तुत: उनकी विचाराभि-यक्ति का माध्यम मलयालम थी। विचार और शैली संस्कृतमय थी।

संस्कृत काव्यशास्त्र का प्रभाव

संस्कृत काव्यशास्त्र के प्रभाव से आधुनिक मलयालम समालोचक कभी पूर्णत: छूट नहीं सके हैं। अनेक विद्वानों का धरातल वही है। इस पृष्ठभूमि पर खडे खडे उन्होंने पश्चिमी काव्यसिद्धान्तों से घनिष्ठता एवं समन्वय सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप मलयालम के समालोचनात्मक साहित्य की बुनियादी शब्दावली संस्कृत ही रही है। युगान्तर और रुचिभेद के कारण नई शब्दकल्पना और अर्थकल्पना ज़रूर की गई है।

आधुनिक मलयालम समालोचना की धारा कई कारणों से अत्यधिक विकसित नहीं हो पाई है। पहला कारण यह है कि आधुनिक मलयालम काव्यशास्त्र शुद्ध समालोचना के ही रूप में चलता है। युग के प्रारंभ में हिन्दी के 'भाषाभूषण' और 'छन्दप्रभाकर' के ढंग पर मलयालम में 'भाषा भूषणम्' और 'वृत्तमंजरी' की रचना हुई थी। इन दोनों के रचयिता श्री ए. आर. राजराजवर्मा ने पश्चिम के रचनाग्रन्थों की शैली में 'साहित्य-साह्यम्' नामक पुस्तक भी लिखी। ये तीनों ग्रन्थ बाद में केरल की पाठशालाओं के पाठ्यक्रम और विद्वानों के प्रमाणग्रन्थ बने। अब भी जिन्हें प्राचीन प्रणाली से रस, अलंकार, छन्द आदि का विवेचन करना है, वे इन्हीं ग्रन्थों पर निर्भर रहे हैं। 'साहित्यसाह्यम्' ने आधुनिक आलोचना का मानो एक नय पथ ही खोल दिया।

मलयालम के प्रशस्त साहित्यसमालोचक स्व. साहित्यपंचानन पी. के. नारायण पिल्ले ने जो व्यावहारिक समालोचना प्रस्तुत की वह चिर-स्मरणीय है। उनकी तुलना हम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी से कुछ कुछ कर सकते हैं। आगे चलकर जो समालोचनात्मक सामग्री मिलती है वह कई प्रकार की है।

1. प्राचीन काव्यसिद्धान्तों पर आधारित
2. विशुद्ध पश्चिमी सिद्धान्तों का केरलीय साहित्य के विषय में परीक्षण

3. प्राचीन भारतीय और पश्चिमी सिद्धान्तों का समन्वय
4. विशेष राजनैतिक विचारों से अनुमाणित और पूर्वरागाश्रित समालोचना

सर्वश्री कुट्टिक्कृष्णमारार, ए. बालकृष्णपिल्ले, प्रो. जोसफ मुण्डश्शेरी और कुट्टिप्पुषा कृष्णपिल्लै आदि विभिन्न समालोचना - शैलियों के प्रतिनिधि लेखक कहला सकते हैं ।

हिन्दी और मलयालय की आधुनिक समालोचना के क्षेत्र में और एक बात भी दृष्टव्य है । हिन्दी में काव्यसिद्धान्तों का जितना सांगोपांग विवेचन हुआ है और जितने सुधी समालोचकों ने इस विषय में ग्रन्थरचना की हैं उतना व्यापक विवेचन और उतने लेखक मलयालम में नहीं मिलते । केरल छोटा सा प्रान्त है और काव्यशास्त्रोय अध्ययन यहाँ का उच्चतर शिक्षा-संस्थाओं और थोडे विद्वानों तक सीमित रहा है । शोधकार्य भी केरल में अभी कुछ वर्षों से ही विश्वविद्यालयीन स्तर पर चल रहा है । आधुनिक युग के प्रारंभ में जो समीक्षात्मक लेख निकले वे संख्या की दृष्टि से भी बहुत कम थे । मतलब यह कि यहाँ की आधुनिक समालोचना–परंपरा वर्तमान युग में ही दृढ होती जा रही है । इस विवशता या कमजोरी का प्रभाव साहित्यिक शब्दावली पर भी कुछ न कुछ पडा है । फिर भी हम कह सकते हैं कि जो साहित्यिक शब्दावली यहाँ बनती जा रही है वह प्रायः तर्काश्रित, सरल और मधुर रही है ।

मलयालम में व्यावहारिक समीक्षा की विशेष लोकप्रियता रही है । फिर भी सैद्धान्तिक समालोचना के कई ग्रन्थ यहाँ मिलते हैं । इन्हें परिचयात्मक कहना अधिक समीचीन होगा । 'भाषानाटकपरिशोधना' ('सी. अन्तप्पायी) 'रूपमंजरी' (ए. बालकृष्णपिल्लै) 'काव्यपीठिका' (जोसफ मुण्डश्शेरी) 'नाटक प्रवेशिका' (ए. डी. हरिशर्मा) 'साहित्यप्रवेशिका' (शूरनाट्टु कुंजनपिल्ले) 'नोवल साहित्यम्' (एम. पी. पोल)आदि परिचयात्मक समीक्षाग्रन्थों के प्रतिनिधि हैं । इस कोटि के कई अन्य ग्रन्थ भी लिखे गये हैं । इन लेखकों तथा व्यावहारिक समालोचना के अन्य रचयिताओं की साहित्यिक शब्दावली की बडो आवश्यकता पडती रहती है । इन्होंने समय समय पर पुराने शब्द परिवर्तित करके, नये शब्द गढकर और पुराने शब्दों की नई अर्थकल्पना करके अपना कार्य संपन्न किया है ।

तुलनात्मक अध्ययन

भाषाविकास और शब्दग्रहण के संदर्भ में भी हम आधुनिक मलयालम हिन्दी की साहित्यिक शब्दावली की चर्चा कर सकते हैं । इन दोनों वाङ्मयों

की साहित्यिक शब्दावली के कुछ समान स्रोत होते हैं और इसीलिए ऐसी तुलनात्मक विवेचना संभव हुई है। इसी संदर्भ में निम्नलिखित विचारसूत्र प्रस्तुत हैं...

1. हिन्दी मूलत: शौरसेनी और अर्द्धमागधी अपभ्रंशों से निकली हुई बोलचाल की भाषा है। बोलचाल के संकुचित और मामूली स्तर से ऊपर उठकर हिन्दी जब साहित्यभाषा के विराट और गंभीर स्वरूप को पा गई तब उसने अपनी गंभीरता के अनुकूल सक्षम और समान शब्दों को संस्कृत से ही ग्रहण किया। जब कभी गहरे विचार प्रस्तुत करने पडे तब हिन्दी संस्कृत पर ही निर्भर रही।

मलयालम मूल द्राविड परिवार की अन्यतम भाषा है और प्रारंभिक दशा में यह प्राय: तमिल की छत्रछाया में पली थी। मगर जब संस्कृतज्ञ लोगों ने इस भाषा के विकास का दायित्व अपने हाथों में लिया तब से मलयालम का घनिष्ठ संपर्क संस्कृत से होता आया है। गंभीर विचार व्यक्त करने के लिए संस्कृत शब्द ही अधिक उपयोगी समझे गये। साथ ही तमिल प्रभाव शीघ्र ही ढीला हो चला था।

2. वैसे तो साहित्य भाषा का कैदी नहीं हो सकता। वह मानव हृदय की लहरों की वाणी है; कल्पनाविहंगम के कोकिलकण्ठ का कलरव है, तत्वहृदय की बाँसुरी के छेदों से निकलता सरगम है और तर्क के बल पर प्रौढ मुख से निकलता सिंहगर्जन है। इन बहुमुखी प्रवृत्तियों को प्रस्तुत करने के लिए नोन-रोटी-तेल माँगने की ठेठ भाषा या मामूली शब्दावली काफी नहीं है। यही कारण है कि मलयालम और हिन्दी दोनों भाषाओं ने नियमित रूप से शब्दों का ऋण लिया है। दोनों एक ही महाजन से कर्ज लेती हैं। इस महाजन में यह विशेषता है कि यह उधार का पैसा वापस नहीं माँगता। उधार लेनेवाले कभी कभी उधार को उधार मानने में संकोच भले ही न करें।

3. संस्कृत से लिये हुए उधार के शब्दों की व्याख्या विशेष विचारणीय है। नये नये भावों के अनुसार नवीन शब्द गढना मुश्किल होता है। गढने पर भी ये शब्द शीघ्र चालू नहीं होते। अतएव प्राचीनता और रूढि के प्रेमी लोग नये भावों और नई व्याख्याओं को पसन्द नहीं करते। कभी कभी प्राचीन शब्दों में नवीन अर्थों का समावेश मानकर नवीन विचारों के लिए प्राचीन शब्दों से युक्त विचित्र भाषा का व्यवहार किया जाता है। पश्चिमी शब्दों के अनुकरण में विलक्षण संस्कृत शब्द गढने की जो प्रवृत्ति थोडे से संस्कृतज्ञ विद्वानों में रही थी वह यहाँ सक्रिय होती है। ये नये साहित्यरूप

विचारों और व्याख्याओं को प्राचीन शब्दों की भूमिका देना चाहते हैं। यह अक्सर सफल नहीं होता।

4. हिन्दी तथा मलयालम ने तत्सम साहित्यिक शब्दों की स्वीकृति में समान उदारता अवश्य दिखाई है। ऐसे शब्दों का निर्माण भिन्न भिन्न युगों में भिन्न भिन्न स्थानों के लोगों के द्वारा किया गया था। इसलिए वैविद्ध्य भी अनुभव होता है। यह कहना भी कठिन है कि दोनों भाषाओं में समान रूप से एक ही शब्दावली को स्वीकार किया गया है। संस्कृत में कई शब्द एक ही अर्थ के पर्यायवाची होते हैं। इनमें से कुछ शब्द हिन्दी में अधिक प्रचलित हुए। मलयालम में तो दूसरे ही शब्द इस अर्थ में चले। उदाहरण...

हिन्दी–	मलयालम	हिन्दी	मलयालम
प्रसारण	प्रचारम्	प्रबन्ध काव्य	कथाकाव्यम्
प्रवृत्ति	प्रवणत	राग	विकारम्
उपन्यास	आख्यायिक	कल्पना	भावन

5. दोनों भाषाओं के समीक्षकों ने नवीन अर्थबिंबों के विधान के लिए संस्कृत के मूल धातुओं के आधार पर नये नये शब्दों का निर्माण किया है। संस्कृत की शब्दरचना–प्रक्रिया में क्रियाधातु के अन्त में कृत् लगाकर कृदन्त बनाने की विधि सबसे मुख्य है। संज्ञा, करण, कर्ता आदि विभिन्न अर्थों में घञ्, ठ, कन्, ति, ण्वुल्, आदि प्रत्यय लगते हैं। इनमें से कुछ शब्दों को नपुंसक बनाते हैं, कुछ को स्त्रीलिंग। स्त्रीलिंग और पुल्लिग का निर्णय व्याकरणिक नियमों के अनुसार होता है। हिन्दी साहित्य के समीक्षकों ने अभ्यास और परिचय के कारण इनमें से खास खास कृत् प्रत्ययों को स्वीकार किया। मलयालम के विद्वानों ने अपनी रुचि और अभ्यास के अनुसार थोडे से अन्य कृत् प्रत्ययों को स्वीकार किया। निष्कर्ष यही है कि एक ही मूल संस्कृत शब्द हिन्दी में एक रूप में आता है मलयालम में उसका रूप कुछ भिन्न होता है। उदाहरण–

हिन्दी	मलयालम	हिन्दी	मलयालम
विवेचना	विवेचनम्	चित्रण	चित्रीकरणम्
व्याख्या	व्याख्यानम्	गवेषणा	गवेषणम्

6. तत्सम शब्दों की स्वीकृति में हिन्दी और मलयालम में विशेषण और विशेष्य के संबन्ध की भिन्नता के कारण थोडी सी विचित्रता अनुभव होती है। मलयालम की विशेष प्रवृत्ति यह रही है कि अप्राणिवाचक और

अमूर्तबोधक शब्द बहुधा नपुंसकलिंग होते हैं। हिन्दी पाठकों के लिए यह कुछ नई प्रवृत्ति लग सकती है। यों मलयालम में विशेषण के साथ प्रत्ययांश जुडता है जो विशेष्य के साथ उसे मिला दे। प्रत्ययप्रधानता इस भाषा की विशेषता है। हिन्दी में तो विशेषण और विशेष्य का आसपास रहना अक्सर काफ़ी समझा जाता है, उन दोनों में चुम्बकत्व का आकर्षण माना जाता है। तत्सम विशेषण हलन्त जो हैं वे केवल अर्थबोध के कारण पुंलिंग या स्त्रीलिंग माने जाते हैं। इसलिए अन्य भाषाओं के पाठकों को हिन्दी के ये रूप खटकते भी हैं। उदाहरण-महान कविता, सुन्दर रचना। ऐसे शब्दविधान में हिन्दी की अपेक्षा मलयालम अधिक स्पष्ट, तर्काश्रित और सरल अनुभव होती है।

यहाँ जिन विविध स्रोतों के साहित्यिक शब्दों की बातें बताई गई है उनकी व्युत्पत्ति अपने में रोचक है। इन शब्दों में अधिकतर संस्कृत के हैं। पर उस भाषा में उनका अर्थ और व्युत्पत्तिप्रणाली आधुनिक अर्थ और प्रणाली से कितनी भिन्न है! यह बडी आश्चर्यजनक बात सी लगती है। अनेक शब्दों का स्वरूप ही तत्सम है। व्याख्या वक्ता की इच्छा के अनुसार की जाती है। आगे ऐसे अनेक शब्द हिन्दी और मलयालम के आते हैं जो परस्पर रूप से सदृश होने पर भी अन्य बातों में भिन्न ही हैं। जो सिर्फ़ हिन्दी साहित्य के छात्र हैं वे इस ग्रन्थ में दिये गये हिन्दी के आलोचनाप्रधान शब्दों के अध्ययन से उनकी व्युत्पत्ति का ज्ञान लाभ कर सकते हैं। जो मलयालम के समीक्षासंबन्धी शब्दों के विषय में रुचि रखते हैं वे मलयालम खण्ड के शब्दों की व्युत्पत्ति आदि समझ लेने से ही लाभ उठा सकते हैं। जो लोग दोनों की शब्दावलियों का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं उन्हें शब्दों की तुलना बडी रोचक लगेगी।

हिन्दी की साहित्यिक शब्दावली सर्वथा त्रुटिहीन नहीं है। अनेक आचार्यों और यशः प्रार्थियों ने नवीनता के प्रेम से एक ही अर्थ के अनेक शब्द गढे हैं। संकेतित शब्दावली और प्राविधिक शब्दावली के लिए यह बहुरूपता अत्यन्त वाँछनीय नहीं कहला सकती। यों सर्वसम्मति से स्वीकृत लगनेवाले कई चालू समीक्षासंबन्धी शब्द पूर्णतः अर्थग्रहण नहीं कराते। कुछ शब्द तो खटकते भी हैं। ऐसी परिस्थिति में हिन्दी के समीक्षकों और समीक्षाशास्त्र के आचार्यों को हिन्दी की समीक्षाशब्दावली का नियत और निश्चित रूप-निर्धारण करना होगा। इस प्रक्रिया के लिए हिन्दी और मलयालम की साहित्यिक शब्दावली की तुलना के समान अन्य दक्षिणी भाषाओं के विषय में भी तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिए। ऐसा प्रयास अखिल भारतीय मानक के विधान में भी सहायक होगा।

समुद्र की अपार जलराशि से मोती निकाल निकाल कर उन सबको एकत्र इकट्ठा करना विशेष कठिन कार्य है। भाषा भी तो एक सागर ही है और इस सागर से शब्दरत्न चुन लेना टेढा काम है। यह कार्य शुरू करते समय सरल लगता था, परन्तु समय के बढते बढते चयनत्याग कठिन होता गया। हमने शब्दावली में प्राचीन संस्कृत साहित्य के स्पष्ट समीक्षा-शब्दों को समझ बूझकर छोड दिया है। ज़ोर उन्हीं शब्दों पर दिया गया है जो निश्चित रूप से आधुनिक अर्थसंदर्भ में प्रयुक्त हुए हैं। शब्द की व्युत्पत्ति शुद्ध संस्कृत ग्रन्थों के प्रमाण के आधार पर बताई गई है। संदर्भ-ग्रन्थ का उल्लेख भी हुआ है। जहाँ नई गठन है और संदर्भ-ग्रन्थों में गठन का उल्लेख नहीं मिलता वहाँ अनुमानत: व्याख्या दी गई है।

हिन्दी शब्दों का ही इस ग्रन्थ में पहला स्थान है। प्रथम खंड में हिन्दी शब्द है। द्वितिय में व्युत्पत्ति है। तृतीय में हिन्दी का उदाहरणवाक्य है।चौथे में अभिन्न या समान मलयालम शब्द है। शब्दों का उद्धरण प्रामाणिक समीक्षाग्रन्थों से ही प्राय: दिया गया है। शब्दतारावलि नामक प्रमाणिक शब्द-कोष को भी यत्र तत्र संदर्भ। ग्रन्थ के रूप में दिया है। इन आधारभूत ग्रन्थों से उद्धरण विस्तृत रूप से तैयार किये गये हैं। लेकिन यहाँ केवल प्रसंग व पृष्ठ का उल्लेख किया गया हैं। जिज्ञासु पाठक कृपया उक्त ग्रन्थों का अवलोकन करेंगे। मलयालम में आधुनिक समीक्षा के विकास की तथा समीक्षाप्रधान ग्रन्थों की कमी के कारण हिन्दी शब्दों के अनुपात में कम शब्द मलयालम में उक्त ग्रन्थों में मिले हैं। जिन शब्दों के समान शब्द उक्त ग्रन्थों में नही मिले उन शब्दों को अधूरा छोडने के अनौचित्य के विचार से अंतिम 'विशेष' खण्ड में उचित एवं अनुमानित मलयालम शब्द दिये गये हैं। इन्हें प्रामाणिक भले ही न मानें, फिर भी इनका प्रयोग असगत नहीं लगता।

इस ग्रन्थ में दिये गये शब्द चुने हुए समीक्षात्मक ग्रन्थों से उद्धृत हैं। यथासंभव विविधता और प्रामाणिकता का निर्वाह किया गया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,आचार्य द्विवेदी, आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी आदि लब्धप्रतिष्ठ समीक्षकों की रचनाओं से ही शब्दचयन हुआ है। यों मलयालम के प्रतिष्ठित समीक्षकों के ही शब्द लिये गये हैं। जैसे कुट्टिकृष्णमारार, एम. पी. पोल, कुट्टिप्पुषा कृष्णपिल्लाई आदि के ग्रन्थों से ही मलयालम् शब्द उद्धृत हैं। उद्धृत ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण अलग पृष्ठ पर दिया गया है।

डा एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अचेतन	चेतना-शून्ये अचेतने (वाच०) दे० अचेतस् (वाच०)	''अचेतन के विषय में बहुत से सिद्धान्त प्रचलित हैं, इनमें फ्राइड़ का सिद्धान्त प्रमुख है और साहित्यपर इसका प्रभाव अधिक पड़ा है। इनके अनुसार मानस का अचेतन भाग चेतन से कहीं अधिक विस्तृत और शक्तिशाली है।'' सा० को० पृ० 11.	अचेतनम् श० ता० पृ० 57.	
अज्ञेयता	ज्ञेय—ज्ञा—कर्मणि यत् (वाच०) ज्ञेय + नञ् अज्ञेय (आ०)	''हो सकता है, यह अज्ञेयता भी आधुनिकता के सन्दर्भ में हो लेकिन यह या तो रोमानी परम्परा का संस्कार होगा या स्वयं अज्ञेयता की अनुभूति अनुभूत होकर व्यक्त होगी।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 45.	ज्ञेय श० ता० पृ० 713.	अज्ञेयत
अज्ञेयवाद	अज्ञेय + वाद वाद—वद+घञ् (वाच०) अज्ञेयवाद (आ०)	''यह शब्द टामस हैनरी हक्सले द्वारा गढ़े अंग्रेज़ी शब्द ऐग्नास्टिसिज्म का हिन्दी रूप है। इस वादके अनुसार भौतिक पदार्थ, आत्मा, परमात्मा आदि जैसे दार्शनिक और धार्मिक परमतत्व अज्ञेय हैं, उनके विषय में निश्चित ज्ञान प्राप्त कर सकना मनुष्य केलिए असम्भव है। उन्नीसवीं	अज्ञेयवादम् म० ल० पृ० 141.	अग्नोस्टिसिसम

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		शताब्दी में टा० हे० हक्सले ने अपनी आस्था का विश्लेषण करते हुए अज्ञेयवाद को ही बुद्धिसंगत मार्ग स्वीकार किया।" सा० को० पृ० 12.		
अति-प्राकृतिक	प्राकृतिक-प्रकृत्या निवृत्तः ठञ् (वाच०) अति + प्राकृतिक	"जो महान चिन्तक है वह ज़रूर अतिप्राकृतिक चमत्कारों का अधिष्ठाता होना चाहिए।" मा० मू० और० सा० पृ० 54.		अतिप्राकृतिकम्
अति-यथार्थवाद	यथार्थ-अर्थमनतिक्रम्य- (वाच०) अति + यथार्थ + वाद	"अतियथार्थवाद का जन्म अन्य बहुत से कला-आन्दोलनों के समान सर्वप्रथम फ्रॉन्स में हुआ। आगे चलकर सबसे अधिक आश्रय भी उसे वहाँ के कलाकारों ने दिया। इसका संबन्ध स्वप्नों तथा व्यक्ति की अर्धजाग्रत अवस्थाओं से है। कविता के उद्गम के संबन्ध में स्वतः चालित लेखन का सिद्धांत आधुनिक आलोचना में पर्याप्त रूप से प्रचलित है। अति-यथार्थवाद के समर्थकों ने तो कविता का स्वप्न से अपरिहार्य संबन्ध माना है।" सा० को० पृ० 75.		(सर–रियलिज़म)

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अतिवादी	अति + वद्— णिनि (वाच०)	''तीसरा है सामाजिक मूल्यों का निर्धारण और उनकी वास्तविक मर्यादा, उनका अनुपात (प्रोपोरशन) उनका महत्व (इम्पोर्टन्स,) ....प्रचारवादी और अतिवादी (एक्साजरेशन), ...और उसकी मूलभूत आस्तिकता (फैथ) कायम रहे।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 188.	अतिवादि श०ता० पृ० 81.	
अतिसरली-करण	सरल— सृ + अलच् (वाच०) करण— क्रियतेऽनेन कृ— करणे ल्युट् (वाच०) अति + सरल + करण	''वैल्स के दिए हुए तर्क आज कुछ अतिसरलीकरण जान पड़ते हों, वह दूसरी बात है। लेकिन मानवीय व्यक्ति के चरित्र—विकास केलिए ईर्ष्या—मुक्ति का जो सैद्धान्तिक प्रश्न उन्होंने उठाया था, वह मुझे आज भी एक जीवित प्रश्न जान पड़ता है।'' आत्मनेपद पृ० 85.		अतिसरलीकरणम्
अधिनायक-तंत्र	नायक-नी—०ण्वुल् (वाच०) तन्त्र—तन्यते	''............क्योंकि यद्यपि यह सच है कि कुछ यूरोपीय लेखकों ने पूँजीवादी व्यवस्था की असंगतियों और कुछ ने आधिनायकतंत्र के दबावों और प्रलोभनों के कारण अन्त-		साम्राज्य— प्रभुत्वतन्त्रम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	तनोति वा वाच० अधि+नायक+तन्त्र	रात्मा को हिरण्मय पात्र से ढंक दिया।'' मा० मू० और० सा० पृ० 67.		
अधिनायक-वादी	नायक—ना—ण्वुल् (वाच०) अधि+नायक+वादी	''प्रगतिवादी या साम्प्रदायिक मानववादी को ऐसा व्यक्ति सदैव छोटा लगेगा, ...और यह जानता है कि अधिनायकवादी प्रवृत्ति को यदि किसी व्यक्ति से खतरा हो सकता है तो वह इसी प्रकार का व्यक्ति होगा।'' न० प्र० पु० नि० पु० 102.		स्वेच्छाधिपत्य-वादि
अधिनियम	नियम—नि+यम—घञ् वा ह्रस्वः (वाच०) अधि+नियम	''वह यह भी मानता है कि इस विवेकवादी नैतिकता में सभी केलिए कोई यान्त्रिक अधिनियम या सभी के लिए एक-सी पोशाक नहीं होती। मा. मू. और सा० पृ० 112		नियमम्
अधिमात्र	अधिका मात्रा यस्य—मात्रच् वा (वाच०)	''लेकिन जीवन का अनुभव अधिसंख्य या अधिमात्र का ही अनुभव नहीं है—जो परिपक्वता की ओर ले जाय वही अनुभव है।'' आत्मनेपद पृ० 84.		अधिकम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अधीरता	अधीर– चञ्चले; कातरे (वाच०)	''देश के जन–जीवन में एक अपूर्व हलचल व्याप्त हो गई, जागृति की नयी भावनाओं ने भारतीय जनता के अन्तर के ओर-छोर को झकझोर दिया..............वह अब प्रत्येक व्यक्ति को आशा और निराशा, मुक्तिकामना और अनिश्चितता, दृढ़ संकल्प और अधीरता विश्वास और आशंका की प्रबल लहरों पर डुबाने-उतराने लगा'' । 'साहित्यानुशीलन' पृ० 65.	अधीरत पा०सा०द० पृ० 103.	
अध्ययन–परंपरा	अध्ययन— अधि+इङ- इक् वा भावे अच् (वाच०) परम्परा— परम् अतिशयेन पृणाति पिपूर्ति वा पृ—पवा अच् (वाच०) अध्ययन+परंपरा	''वह अध्ययन–परम्परा उस गति से आगे न बढ़ पायी जैसे कि बढ़ने चाहिए थी........विकास नहीं हो पाया।'' मा०मू०और०सा० पृ 151.		अध्ययनपरंपर
अध्यर्थ	अधि+अर्थ *अधिकार्थ*	''इतना ही नहीं, हमने जो मान लिया है, उसपर भी *बराबर कायम नहीं रहते, अर्थ थोडा उन्नीस बीस होता ही*		अधिकार्थम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		रहता है और फिर ये ऊनार्थ और अध्यर्थ शब्द का संस्कार या इतिहास बनकर उसमें और एक नया अर्थ जोड देते हैं।'' आत्मनेपद पृ० 161.		
अध्यात्म-परम्परा	अधि + आत्मन् + + टच् → अध्यात्म (वाच०) अध्यात्म + परंपरा → अध्यात्मपरंपरा	''इससे रहित होकर स्थूल अपने भौतिकवाद द्वारा जीवन में वही विकृति उत्पन्न कर देगा, जो अध्यात्मपरम्परा ने की थी।'' 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध' पृ 71.	अध्यात्मम् श०ता० पृ० 95.	अध्यात्म-पारम्पर्यम्
अनस्तित्व	अस्तित्व — अस्ति भावः त्व। (वाच०) अस्तित्व + नञ्	''वे ही अर्थवान् क्षण हैं, आत्मोपलब्धि के क्षण हैं, आत्मोपलब्धि के क्योंकि उन्हीं में हम अपने को पाते हैं—अर्थात् अर्थहीन शून्यता या अयथार्थमूलक अनस्तित्व से मुक्त कर अपने को सार्थक पाते हैं।'' मा० मू० और० सा०		अनस्तित्वम्
अनात्मा	न आत्मा अप्राणत्वे भेदार्थे च (वाच०)	''दूसरे, यह भी परिणाम निकलता है कि जिसे हम भारत की आत्मा कहते हैं वह वास्तव में आत्मा और अनात्मा का, जीवित और जड़ का एक पूंज है,............		अनात्म

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		भारतीयता माना जाता है।'' आत्मनेपद पृ 103.		
अनात्यन्तिक	आत्यन्तिक + नञ् आत्यन्तिक— अत्यन्तं गच्छति अत्यन्त + ठण् (वाच०)	''भक्ति आन्दोलन में अनुभूति की यथार्थता का एक प्रकार का आग्रह था, छायावादी आन्दोलन में एक दूसरे प्रकार का, और—यदि समकालीन प्रवृत्ति के बारे में एक अनात्यन्तिक स्थापना मुझे करने दी जावे—नयी कविता में एक तीसरे प्रकार का आग्रह है।'' आत्मनेपद पृ० 139.		अनात्यन्तिकम्
अनास्था	आस्था- आ + स्था + अङ (वाच०)	''जहाँ केवल अविश्वास ही उसका सम्बल है, वहाँ वह जीवन के प्रति भी अनास्था उत्पन्न किये बिना नहीं रहती।'' सा० की० आ० त० नि० पृ० 47.	अनास्थ श० ता० पृ० 103.	
अनास्थावान	दे० अनास्था	''और जीवन के प्रति अविश्वासी व्यक्ति का, सृजन के प्रति भी अनास्थावान हो जाना अनिवार्य है।'' सा० की० आ० त० नि० पृ० 47.	अनास्थ श० ता० पृ 103.	आस्थाहीनन्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अनिवार्यता		कर्मफल की अनिवार्यता में, दुर्भाग्य और सौभाग्य की अद्भुत शक्ति में और मनुष्य के अपूर्व शक्तिभांडार होने में दृढ़ विश्वास ने इस देश के ऐतिहासिक तथ्यों को सदा काल्पनिक रंग में रंगा है। सा० स० पृ० 90.		अनिवार्यत
अनिश्चि-तता	निश्चित— निर्+चि— कर्मणि क्त (वाच०) अनिश्चित— निश्चित+नञ्	''उस पलायन में जिस प्रकार चिर-जीवन की आकांक्षा के पीछे मनुष्य की निस्सहायता और भय का भाव था, उसी प्रकार आज के मनुष्य के इस पलायन या प्रेम और सुख के क्षणों को क्षणकालिक मानने की वृत्ति के पीछे सामाजिक प्रतिबन्धों से उत्पन्न जीवन की अनिश्चितता के प्रति भय और कुण्ठा का भाव है।'' साहित्यानुशीलन पृ० 219.	अनिश्चितत्वम् पा० सा० द० पृ० 420.	
अनुगम–पद्धति	अनुगम— अनु+गम+ घञ् पद्धति— पादेन हन्यते— हन्—गती आधारे क्तिन्	''साहित्यिक कृति के विशद विश्लेषण एवं सूक्ष्म निरीक्षण पर आधृत अनुगम-पद्धति का उपयोग भी सर्वप्रथम प्राचीन यूनान में ही किया गया।'' पा० का० शा० की० पा० सम्पादकीय वक्तव्य पृ० 2.		अनुगमपद्धति

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	पदादेशः वा ङीप् (वाच०) अनुगम + पद्धति			
अनुप्रेरणा	प्रेरणा— प्र + ईर् + णिच् + युच् (श० क०) अनु + प्रेरणा	''किन्तु इस प्रकार का नियतिवादी दर्शन मानव की सहज स्वतंत्र वास्तविक अनुप्रेरणा को कई ढंग से कुंठित कर देता है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 109.		अनुप्रेरणा
अनुभूति	अनु + भू + क्तिन् (वाच०)	''इस प्रकार प्रत्यक्ष अनुभव भी हुआ–पर अनुभव से अनुभूति गहरी चीज़ है, कम-से-कम कृतिकार केलिए। अनुभव तो घटित का होता है, पर अनुभूति संवेदना और कल्पना के सहारे उस सत्य को आत्मसात् कर लेती है जो वास्तव में कृतिकार के साथ घटित नहीं हुआ है।'' आत्मनेपद पृ० 238.	अनुभूति क० सा० ओ० प० पृ० 23.	
अनुभूति—प्रक्रिया	प्रक्रिया— प्र + कृ—भावे श अनुभूति + प्रक्रिया	''वह क्षण, जिसमें वह कृति रची गई, उस लम्बे इतिहास की ही एक सम्बद्ध कड़ी है और वह कलाकार उसी समह की एक इकाई है, फिर भी किसी विशिष्ट अनुभूति-प्रक्रिया		अनुभूति प्रक्रिय

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		और रचना–प्रणाली के बलपर सृजनका वह क्षण समस्त ······और मर्म-स्पर्शी बन जाता है।'' मा॰ मू॰ और॰ सा॰ पृ॰ 146.		
अनुवाद	अनु+वद्—घञ् (वाच॰)	''लेकिन जेल जाने के बाद से ज़ोरों से लिखना शूरू किया। उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध-सभी कुछ। इनसे अभी अवकाश लिया तो पुस्तकों का अनुवाद करने बैठ गया।'' आत्मनैपद पृ 25.	परिभाष श॰ ता॰ पृ॰ 974.	
अनुशीलन	अनुक्षणं शीलनम्→ अनुशीलनम् (वाच॰)	''हिन्दी में साहित्यिक अनुशीलन का कार्य बहुत कुछ सुनिश्चित गति से आगे बढ़ रहा है। आधुनिक युग के आरंभ में हमारे अनुशीलन की दिशा स्पष्ट न थी।'' न॰ सा॰ न॰ प्र॰ पृ 50.	गवेषणम् म॰ सा॰ च॰ पृ॰ 270.	
अन्त:प्रेरणा	अन्तर्+प्रेरणा	''कभी-कभी ऐसा लगता है कि साहित्य के मूल्यांकन के		आन्तरिक प्रेरण

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		की अन्त:प्रेरणा की वास्तविक मानवीय प्रकृति को समझने में भूल करते हैं।'' मा० मू० और सा० पृ० 156.		
अन्त:संघर्ष	संघर्ष— सम्+घृष्+ घञ् (वाच०) अन्त:+संघर्ष	''टेक्नीक की दृष्टि से ये तीनों उसके अन्त:संघर्ष को और स्पष्ट करने का काम करते हैं।'' आत्मनेपद पृ० 66.		आन्तरिक संघर्षम्
अन्तर्ग्रथित	अन्तर्— अम्—अरन् तुडागमः (वाच०) ग्रथित— ग्रन्थ संदर्भे क्त न लोय: (वाच०) अन्तर्+ग्रथित	''जब नायकहीन क्रान्ति होती है; चाहे चेतना में, चाहे राजनीति में — तब यह अनिवार्यता दृष्टिगोचर होने लगती है कि अब हमारा सारा कर्म अपने चिन्तन और अपने ही विवेक से उद्भूत होना चाहिए, ...,और जब उसपर आक्रमण होगा तो हम उसकी रक्षा करेंगे। इस प्रकार विवेक और साहस अन्तर्ग्रथित हो जाते हैं।'' मा० मू० और० सा० पृ० 95.		अन्तर्ग्रथि-तम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अन्तर्देशि-कता	अंतर् + देश	"आवश्यकता इस बात की है कि नये पत्रों-पत्र-पुस्तकों में प्रादेशिकता और अन्तर्देशिकता का सामंजस्य किया जाय।" आत्मनेपद पृ० 120.		अन्तर्देशीयत
अन्तर्बोध	बोध्— बुध् भावे घञ् (वाच०)	"अन्तश्चेतना शुभाशुभ या, सदसत् को पहिचानने की वह आन्तरिक शक्ति है, ... इस अर्थ में हिन्दी में कई शब्द प्रचलित हैं, जैसे अन्तजानि अन्तर्बोध और अन्तःकरण। किन्तु 'अन्तःकरण' का एक विशिष्ट दार्शनिक और मनो-वैज्ञानिक अर्थ है जो कोनष्यन्स् से सम्बन्धित नहीं है, अतः अन्तश्चेतना, अन्तर्ज्ञान और अन्तर्बोध ही इस अर्थ में रूढ़ है।" सा० को० पृ० 7.	उपबोध (प्रेरणा) नो० सि० सा० पृ 132.	उपबोधम्
अन्तर्मुखी	अन्तर्मुख— अन्तः मुखं यस्य (वाच०)	"जुंग के अनुसार व्यक्ति मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं– अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी। अन्तर्मुखी व्यक्ति विचारों और भावनाओं में केंद्रित होने के कारण अधिक भावुक, कल्पनाशील, एकांतप्रिय और अव्यावहारिक होते हैं। सा० को० पृ० 469.	अन्तर्मुखन् म० ल० पृ० 407-408	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अन्तर्विरोध	विरोध— वि + रुध्—घञ् (वैरे) (वाच०) अन्तर् + विरोध	''आगे और भी इस अन्तर्विरोधपूर्ण असंगत फासिस्ट का विश्लेषण करते हुए वह कहता है, ... सिसक सिसककर रोया करता था।'' मा० मू० और० सा० पृ 33.		अन्तर्विरोधम्
अन्त- वृत्तियाँ	वृत्ति— वृत —क्तिन् (वाच०) अन्तर् + वृत्ति	''क्योंकि असंगठित अन्तर्वृत्तियाँ मनुष्य के भावजगत की आवश्यकताओं के प्रति मानवता की अन्तर्वृत्तियों में परिवर्तन नहीं कर सकतीं।'' साहित्यानुशीलन पृ० 182.	अन्तःकरणवृत्ति साहितीयम् पृ० 55.	
अन्तर्वृत्ति- निरूपक	निरूपक— नि + रूप + ण्वुल् (वाच०) अन्तर् + वृति + निरूपक	''बात यह है कि प्रवृत्ति अन्तर्वृत्तिनिरूपक प्रगति मुक्तकों की ओर ही अधिक हो जाने के कारण बाह्यार्थनिरूपिणी प्रतिभा का ह्रास हो गया और छोटी छोटी फुटकल रचनाओं के अभ्यास के कारण किसी सुव्यवस्थित, भव्य और विशाल आयोजन की क्षमता जाती रही।'' चि० द्० भा० पृ० 214.	आत्मनिष्ठन् पा० सा० द० पृ० 100.	
अन्धवृत्त	अन्ध—अच् (वाच०)	''.......किन्तु उनकी संप्रदायगत सीमाएँ मानव विवेक को स्वाधीनता देने के पक्ष में नहीं हैं। अतः उनका चिन्तन		विषमवृत्तम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	वृत्त—वृत—भावे क्त (वाच०) अन्ध+वृत्त	विकासोन्मुख न होकर एक अन्धवृत्त में ही घूमकर रह जाता है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 117.		
अपरम्परा-वादी	परम्परा+वादी+नञ्	''एक वर्ग आलोचकों का ऐसा भी है जो साहित्यिक भूलों, मानवमूल्यों, और सौन्दर्यानुभूति की अपेक्षा कुछ नारे चलाता है। उसमें से सबसे प्रमुख नारा नयी प्रवृत्तियों के विरुद्ध यह लगाया जा सकता है कि यह अराष्ट्रीय है, अपरम्परावादी है, इत्यादि, इत्यादि।'' 'न० प्र० पु० नि० पृ० 180.		अपरम्परावादि
अप्रासंगिक	प्रासंगिक—प्रसंङ्गादागत: ठञ् (वाच०) प्रासंगिक+नञ्	''अगर एक कृति के मूल्यांकन में कृतिकार के जीवन का ब्यौरा अप्रासंगिक है तो दूसरी कृति के साथ वैसा क्यों नहीं? आत्मनेपद पृ० 79.		अप्रसक्तम्
अबुद्धिवाद	बुद्धि-बुध्+क्तिन् (वाच०)	''नूतन रहस्यवाद अपनी अन्तिम परिणति में 'अबुद्धिवाद' और 'अन्धविश्वास' का ही पर्याय बन जाता	अबुद्धि नो० सा० पृ० 267.	अबुद्धिवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	बुद्धि + वाद + नञ्	है—इतना तो साधारणतया अनुमेय है ।'' साहित्यानुशीलन पृ० 2.		
अभियान	अभियाति—अभिमुखं युद्धार्थं याति या—क्तिच् (वाच०) अभियानं—(आ०)	''उस संयमित और संतुलित दृष्टि के अभाव में यह सारा समीक्षात्मक अभियान लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता है,.... विच्छिन्न और जर्जर कर डालता है ।'' मा० मू० और० सा० पृ० 144.		समीपनम्
अभिव्यंजना	अभि + वि + अंज् + अन = प्रकाशने (वाच०)	''कविता अभिव्यंजना है । वह अभिव्यक्ति या विकास को लेकर चलती है ।'' रस० मी० पृ० 63.	अभिव्यंजनम् श० ता० पृ 63.	
अभि-व्यंजनावाद	अभिव्यंजना + वाद	''अभिव्यंजनावाद के आदर्श को माननेवाले अपने को इतालवी दार्शनिक एवं विचारक बनेदेतो क्रोचे का अनुयायी कहते हैं । अभिव्यंजनावादियों का कहना है कि कवि या कलाकार अपने अन्तर की भावना को बाहर प्रकाशित करता है, बाह्य वस्तु को नहीं ।	अभिव्यंजनम् म० ल० पृ० 548.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अभिव्यक्ती-करण	अभिव्यक्ति — अभि + वि + अञ्ज् + क्तिन्	''विकासवाद का सिद्धांत समझाते हुए श्री बोनर का कथन है कि विकासवाद केवल उन प्रेरणाओं और स्फूर्तियों का नियमित अभिव्यक्तीकरण है, जो किसी जीव में अन्तर्हित है।'' सा॰ शा॰ पृ॰ 22.	अभिव्यक्ति म॰ ले॰ पृ॰ 548.	अभिव्यञ्जनम्
अमान-वीयता	मानव — मनोरपत्यं अण् (वाच॰) अमानव + मानव + नञ्	''यथार्थवादी लेखकों ने जब कभी इस समस्या को अपनी रचनाओं में उठाया है — उनका संस्कार इस वर्ण–संकर संस्कृति की असामाजिकता, स्वार्थपरता और अमानवीयता पर ही हुआ है, यद्यपि त्यागी हुई पत्नी, ... और पिछड़ेपन और पुराने संस्कारों की प्रशस्तियाँ गा रहे थे।'' साहित्यानुशीलन पृ॰ 252.	अमानवीयत श॰ ता॰ पृ॰ 143.	
अमूर्त	दे॰ मूर्त	''कम्यूणिसम व्यक्ति को पूर्णत: अस्वीकृत कर केवल एक अमूर्त निराकार समूह को प्रतिष्ठित करता है।'' मा॰ मू॰ और॰ सा॰ प 50.	अमूर्त्तम् श॰ ता॰ पृ॰ 145.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अमूर्त्त	दे० मूर्त्त	''कम्यूणिसम व्यक्ति को पूर्णतः अस्वीकृत कर केवल एक अमूर्त निराकार समूह को प्रतिष्ठित करता है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 50.	अमूर्त्तम् श०ता० पृ० 145.	
अमूर्तन	दे० अमूर्त	''आज के सन्दर्भ में आदमी का रूप कलाकार के अवयव अनुभूति-स्तर पर जो भी है वह सार्थक है क्योंकि वर्तमान रूप के अवयव जब टूट जाते हैं, विशृंखल हो जाते हैं, तब हमारे सामने सिवा इसके कि उसके तात्विक रूप पर बल दें अन्य कोई रास्ता नहीं रह जाता। ऐसी ही स्थिति में अमूर्तन (ऐब्स्ट्रैक्शन) की प्रक्रिया मूल्यवान् हो जाती है।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 44.	अमूर्तनम म० ल० पृ 601.	
अमर्यादित	अमर्य्यादि— नास्ति मर्य्यादा यत्र (वाच०)	''सार्त्र ने स्थायी मानव मूल्यों को आमूल अस्वीकृत कर व्यक्ति की अबाध किन्तु अस्वाभाविक और अमर्यादित स्वतंत्रता का प्रतिपादन किया है।'' मा०मू०और०सा० पृ० 128.		असीमम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अराजक-वादी	अराजक- नास्ति राजा यत्र कप् (वाच०) अराजक+वादी	''एक अराजकवादी के मुँह से इस आलोचना को मैं निंदा तो नहीं मान सकता।'' आत्मनेपद पृ० 68.	अराजकवादम् वि० धा० पृ 81.	
अराष्ट्रीय	राष्ट्र— राज- ट्रन् (वाच०) अराष्ट्र— राष्ट्र+नञ्	''एक वर्ग आलोचकों का ऐसा भी है जो साहित्यिक भूलों, मानव–मूल्यों और सौन्दर्यानुभूति की अपेक्षा कुछ नारे चलाता है। उसमें से सबसे प्रमुख नारा नयी प्रवृत्तियों के विरुद्ध यह लगाया जाता है कि यह अराष्ट्रीय है, अपरम्परावादी है, इत्यादि, इत्यादि।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 180.		अराष्ट्रीयम्
अर्थवत्ता	अर्थवत्— अर्थोऽस्त्यस्य (वाच०)	''यद्यपि आज की स्थिति में .... और हर क्षण यह जानता है कि वह जो कुछ बक रहा है उसकी सार्थकता कहीं नहीं है क्योंकि वह न तो अपनी भाषा बोल पाता है और न उसकी अर्थवत्ता को भोग पाता है।'' न० प्र० पु० नि० प० 95.	अर्थवत्त् म० ल० पृ 711.	अर्थवत्त

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अर्थहीनता	अर्थहीन— अर्थेन हीन: वाच्यार्थहीने च. (वाच०)	''क्षण-प्रतिक्षण की पुरानी होती दुनिया में किसी भी मूल्यनिष्ठ व्यक्ति के लिए उसकी प्रथम प्रतिक्रिया इसी मूल्यहीनता से ही प्रारंभ होगी। आज की संवेदना में इस अर्थहीनता (एब्सर्डिटी) की स्थिति से ही हम शायद उन मरे हुए निर्जीव और नितान्त रूढ़िग्रस्त पुरानी दुनिया के प्रति क्रियाशील हो सकते हैं।'' न० प्र० पु० नि पृ० 25.		अर्थहीनम् युक्तिहीनम्)
अर्द्ध— विक्षिप्त	अर्द्ध— ऋध्—वृद्धौ भावादौ घञ् (वाच०) विक्षिप्त— वि—क्षिप्—क्त (वाच०)	''एक ने मनुष्य को केवल अद्ध—विक्षिप्त, कामुक और विकृत रोगी की स्थिति तक उतार दिया और दूसरी ने मनुष्य की वैयक्तिकता को छीनकर उसे बने-बनाये साँचे में ढालकर कठपुतली में परिवर्तित कर दिया।'' मा० मृ० और० सा० प० 167.		अर्द्धोन्मत्त
अवचेतन	अव+चेतन	''दैवी प्रेरणा की बात सर्वमान्य नहीं है, किन्तु इतना तो स्वत: कलाकारों की साक्षी से ज्ञात है कि उनकी अन्त:	उपबोधमनस् नो० प्र० पृ० 45.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		प्रेरणा मन के सचेत स्तरों की अपेक्षा उसके अचेतन या अर्द्धचेतन स्तरों पर जाग्रत होती है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 157.		
अवमूल्यन	मूल्य- मूल्+यत्—वा (श०क) अव+मूल्य	''ज्यो-ज्यों हम आधुनिक युग में प्रवेश करते गये त्यों-त्यों इस मानवोपरि सत्ता का अवमूल्यन होता गया।'' मा० मू० और० सा० पृ० 9.		अवमूल्यनम्
अवरोध	अव+रुध— भावे—घञ् (वाच०)	'' पर सन्दर्भ के अभाव में बिलकुल निरर्थक और महत्वहीन हो जाता है, केवल एक प्रतिक्रियापरक रूढ़ि के समान ऐतिहासिक प्रवाहमें अवरोध बनकर अड़ जाता है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 58.		अवरोधम्
अवसर-वादिता	अवसर— अव+सृ+अच् (वाच०)	''आज हमारे ... या प्रकृति के नाम पर एक निम्न-कोटि की अवसरवादिता, या प्रत्येक विश्रृंखलता के वस्तु-सत्य की स्वीकृति के साथ प्रत्येक इकाई के टूटे, खण्ड–खण्ड	अवसरवादि म० ल० पृ० 787.	अवसरवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	अवसर+वाद→ अवसरवाद	परिवेश का यथार्थ,........हम लघु मानव की कल्पना के साथ ढूँढना चाहते हैं।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 117.		
असत्यता	असत्य— सत्यभिन्ने, मिथ्याभूते (वाच०)	साधारण गद्य के प्रयोग में जो एक असत्यता आ जाती है उसे कैसे दूर किया जाय, आज के ईमानदार कवि के सामने यही समस्या है 'अयमेव प्रश्नः[१]..............उपस्थित करें। सा० अ० के० प्र० पृ० 98.	अयथार्थकथनम् पा० सा० द० पृ० 400.	
असाधारण-तत्व	असाधारण— साधारणभिन्ने (वाच०)	''काव्य में असाधारणत्व वहीं अपेक्षित होता है जहाँ भावों का अत्यन्त उत्कर्ष दिखाना होता है।'' र० मी० पृ० 81. १ तीसरा सप्तक, पृ 18.	असाधारणत्वम् नो० सि० सा० पृ० 128.	

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
असा-हित्यिक	साहित्य — सहितस्य भाव: (वाच०) असाहित्य — साहित्य + नञ्	''यह कहना कठिन है कि इस प्रश्न को उठानेवाले सभी व्यक्तियों की दृष्टि असाहित्यिक रही है .... ।'' आ० प० पृ० 77.		असाहित्यिकम्
असुरवादी	असुर— अस —दीप्तौ — उर असुर + वादी	''किसीने लघु—मानव को छोटा आदमी कहा, तो दूसरे ने कर्दमवासी और तीसरे ने 'डैविल्स ऐडवोकेट' और चौथे ने 'असुरवादी' और पाँचवें ने कुण्ठावादी ।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 101.		असुरवादी
अस्तित्व-वाद	अस्तित्व — अस्ति भाव: त्व (वाच०) अस्तित्व + वाद	''द्वितीय महायुद्धके बाद जिस अस्तित्ववादी विचार—धारा का आकस्मिक प्रसार पश्चिम में हुआ, उसमें बार-बार जो प्रतीक प्रयुक्त हुआ है, वह इसी तूफानमें ध्वस्त जहाज़ का !'' मा० मू० और० सा० पृ० 20.	अस्तित्वमात्र-वादम् सि. जे. तोमस पृ० 32.	अस्तित्ववादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
अहं–पुष्टि	अहं+पुष्टि	''..........., आज का कवि दूसरे ढ़ंग से अपने को संकुचित करता है तो आत्म–तुष्टि अथवा अहं–पुष्टि के दूसरे मार्ग अपना लेता है।'' आ० प० पृ० 154		अहंपुष्टि
आकारवादी	अ+कृ+घञ्= आकार आकार+वादी	''यह अमूर्तन या ऐब्स्ट्रैक्शन मूलतः उस आकारवादी मनोवृत्ति के विरोध में आता है जो पूर्व-व्यवस्था को नयी व्यवस्था देना चाहता है या पूर्व-व्यवस्था के समक्ष नयी व्यवस्था प्रतिष्ठित करना चाहता है।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 33.		आकारवादी
आख्या-नात्मक	आख्यान— आ+ख्या— भावे ल्युट् (वाच०)	''उपन्यास के रूप में एक ऐसा साहित्य-रूप अस्तित्व में आया जिसने आख्यानात्मक परंपरा को वास्तविक जीवन का काल्पनिक प्रतिनिधान करने में सर्वाधिक समर्थ माध्यम बना दिया।'' सा० अ० के० प्र० पृ० 46.	आख्यानात्मकम् पा० सा० द० पृ० 150.	

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आतंकवाद	आ+तकी घञ्+वाद (वाच०)	''क्रान्ति में संगठित एवं स्व—उत्पन्न असंगठित सामञ्जस्य रहता है, अराजकता में आतंकवाद और व्यक्तिवाद की प्रमुखता रहती है।'' साहित्यानुशीलन पृ० 189.		आतंकवादम्
आतंकवादी	आतंक— आ+तकि— घञ् (वाच०) आतंक+वादी	''यह भारतीय इतिहास के चरम संकट के युगों में कई बार हुआ है और हमारे आधुनिक राष्ट्रीय—संग्राम के युग में भी कई ऐसी घटनाएँ हुई हैं, किसान आन्दोलनों में, आतंकवादी आन्दोलनों में साधारण जन का यह रोब सबसे स्पष्ट और सबसे प्रभावशाली रूप में उभरकर आया था।'' मा० मू० और० सा० पृ० 93.		आतंकवादी
आत्मचरित	आत्मन्— अत्—मनिण् (वाच०) चरित—चर— कर्मणि—क्त (वाच०) आत्म+चरित	आत्मचरित और आत्मचरित्र हिन्दी में आत्मकथा के अर्थ में प्रयुक्त प्रारंभिक शब्द हैं और तत्वतः आत्मकथा से भिन्न नहीं हैं। सा० को० पृ० 98.	आत्मकथ (आ० सा०) पृ० 73.	(आत्मचरितम् आत्मचरित्रम्)

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आत्म-चेतना—प्रधान	प्रधान— प्र+धा—ल्युट् (वाच०) आत्म+चेतना+प्रधान	''आखिर इस व्यक्तिगत को किस माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है, यह भी कविता का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। वस्तुत: प्रत्येक आत्म-सत्य व्याप्त यथार्थ का आत्मचेतना-प्रधान (सल्फ कान्शस) अनुभूति द्वारा ग्रहण किया गया सत्य है।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 146.	आत्मचैतन्यम् पा० सा० द० पृ० 34.	आत्मचेतना प्रधानम्
आत्म-निवेदन	निवेदन-निविद् आ०) आत्म+निवेदन	''इसीसे इस अनेकरूपता के कारण पर एक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोपण कर उसके निकट आत्म-निवेदन कर देना इस काव्य का दूसरा सोपान बना, जिसे रहस्यमय रूप के कारण ही रहस्यवाद का नाम दिया गया।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 94.	आत्मनिवेदनम् श० ता० पृ० 213.	
आत्म-परकता	आत्म+परकता	यही कारण है कि हिन्दो नव-लेखन में व्यष्टि-चिन्तन को ही अधिक प्रमुखता प्रदान की जाती है और		आत्मपरत्वम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		विगत दोनों ही दशकों में आत्मपरकता का ही प्रभुत्व रहा है। सा० अ० के० प्र० पृ० 75.		
आत्म-प्रवंचना	वंचना— वन चु—ल्युट् (वाच०) आत्म+प्र+वंचना	''पर चन्द्रमाधव का चरित्रविकास विकृति की ऐसी ग्रंथियों से गुथीला हो गया है कि उसका विवेक भी उसे कुपथ पर ले जाय, और उसकी सदोन्मुखता आत्म-प्रवंचना के कारण है।'' आत्मनेपद पृ० 74.		आत्मवंचन
आत्म+भाव	आत्म+भाव	''कलाकार का आत्म-भाव या आपा (पेर्सनालिटि) कलाविज्ञान की भाँति कलाकार से निरपेक्ष नहीं है, इस आत्म-भाव से कलाकार के आनन्द का भी सम्बन्ध है।'' सि० और० अ० पृ० 62.	आत्मपरत पा० सा० द० पृ० 283.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आत्म-रति	आत्म—रम्— —क्तिन् (वाच०)	''यह आत्मोपलब्धि डिकैडेण्ट कलाकारों की उस आत्मरति से बिल्कुल पृथक् है जो मानवीय गरिमा को केवल अपने में केंद्रित मानती है । मा० मू० और० सा० पृ० 35.		स्वरति
आत्मवादी	आत्मा+वादी	''आत्मा शब्द के इस वेदोपनिषंत्कालीन इतिहास में आत्मवादी और अनात्मवादी का संघर्ष उल्लेखनीय है । सततगामिता दोनों को मान्य है । पर आत्मवादी आत्मा को सततगामी और एकरूप दोनों मानता है ।'' सा० को० पृ० 101.	आत्मवादि वि० धा० पृ० 53.	
आत्म- विसर्जन	विसर्जन वि+सृज-ल्युट् (वाच०) आत्म + विसर्जन	''परन्तु इस सम्बन्ध से मानव-हृदय की सारी प्यास न बुझ सकी, क्योंकि मानवीय सम्बन्धों में जब तक अनुराग-जनित आत्मविसर्जन का भाव नहीं घुल जाता, तब तक वे सरस नहीं हो पाते और जब तक यह मधुरता सीमातीत नहीं हो जाती, तब तक हृदय का अभाव नहीं दूर हो जाता ।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 94.		आत्मोत्सर्ग

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आत्म-विस्मृत	आत्म—वि—स्मृ—क्त (वाच॰)	''शायद तीन या चार वर्ष का था जबकि बात है, मैं शौचालय में था और वहीं आत्म-विस्मृत भाव से गा रहा था।'' आ॰ प॰ पृ॰ 191.		आत्मविस्मृतम्
आत्मानुभूत	अनुभूत—अनु+भू कर्मणि-क्त (वाच॰)	''हमारे प्राचीन काव्यने बौद्धिक तर्कवाद से दूर, उस आत्मानुभूत ज्ञान की स्वीकृति दी है, जो इन्द्रियजन्य ज्ञान-सा अनायास, पर उससे अधिक निश्चित और पूर्ण माना गया है।'' सा॰ की॰ आ॰ त॰ अ॰ नि॰ पृ॰ 43.		स्वानुभूतम्
आत्माभि-व्यक्ति	अभिव्यक्ति—अभि+वि—अनुज् —क्तिन् (वाच॰) आत्मा+अभिव्यक्ति	''एक ओर जहाँ यह प्राचीन आत्मनिवेदनपूर्ण काव्य से भिन्न है, वहाँ दूसरी ओर छायावाद की प्रच्छन्न आत्माभि-व्यक्तियों से भी इसका पार्थक्य है।'' आस्था के चरण पृ॰ 253.	आत्माविष्करणम् का॰ पी॰ पृ॰ 1. आत्मप्रकाशनम् वि॰धा॰वृ॰51.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आत्मो-पलब्धि	आत्मन्— अत—मनिण् (वाच०) उप—लभ्— क्तिन् (श० क०) आत्म + उपलब्धि	''यह आत्मोपलब्धि डिकैडेण्ट कलाकारों की उस आत्म-रति से बिलकुल पृथक् है जो मानवीय गरिमा को केवल अपने में केन्द्रित मानती है।'' मा० मू० और० सा० पृ० 35.		आत्मोपलब्धि
आदर्श-चरित्र	आदर्श— आदृश्यतेऽत्र दृश्— आधारे घञ् (वाच०) चरित्र— चर—इत्र (वाच०) आदर्श + चरित्र	''कुछ ने सम्प्रदायों की संकीर्णता के बाहर रहकर, आदर्श-चरित्रों को नवीन रूपरेखा में ढाला और इस प्रकार पुरानी सांस्कृतिक परम्परा और नई लोक-भावना का समन्वय उपस्थित किया।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 47.		आदर्शस्वभावम्
आदर्शवाद	आदर्श + वाद	''हिन्दी में आदर्शवाद अंग्रेज़ी भाषा के शब्द 'आइडि-अलिज्म' केलिए प्रयुक्त होता है। मूल शब्द का प्रयोग दो	आदर्शवादम् पा० सा० द० पृ० 100.	आइडिअलिज़्म

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		अर्थों में किया जाता है—एक तो नैतिक आदर्शवाद केलिए और दूसरे एक दार्शनिक दृष्टिकोण विशेष के निमित्त ।'' सा॰ को॰ पृ॰ 93.		
आदर्श-वादिता	दे॰ आदर्शवाद	''किसी गुलाम देश के राष्ट्रीय नव-जागरण के प्रारभिक काल के सृजनात्मक प्रयत्नों में जो अदम्य उत्साह, जो अटूट आशा, जो आनन्दातिरेक, जो सौन्दर्य-कल्पना, जो आदर्श-वादिता, जो निराशा और अवसाद रहता है,वह रवीन्द्रनाथ के काव्य में भी है, और इतनी प्रचुर मात्रा में ही सहसा प्रतीति नहीं होती, आश्चर्यचकित होकर निहारते रह जाना पड़ता है ।'' 'साहित्यानुशीलन' पृ॰ 97.		आदर्शवादित
आदर्शी-करण	आदर्श + करण	''अपने पति गंगाधरराव की ललित-कला, नाट्य-नृत्य और संगीत-प्रेम की रानीके मुख से भर्त्सना कराके लेखक		आदर्शीकरणम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		ने रानी के चरित्र का 'आदर्शीकरण' किया है और उसे उदात्त मानवी न बनाकर एकांकी बना दिया है।'' साहित्यानुशीलन पृ॰ 247.		
आदर्शो-न्मुख यथार्थवाद	उन्मुख— उद्+अर्द्ध मुख-मस्य (वाच॰) आदर्श+उन्मुख यथार्थ+वाद	''आदर्शोन्मुख यथार्थवाद आदर्शवाद तथा यथार्थवाद का समन्वय करनेवाली विचारधारा। इस प्रवृत्ति की ओर प्रथम महत्वपूर्ण संकेत प्रेमचन्द का है। उन्होंने कथा-साहित्य को यथार्थवादी रखते हुए भी आदर्शोन्मुख बनाने की प्रेरणा दी और स्वतः अपने उपन्यासों तथा कहानियों में इस प्रवृत्ति को जीवन्त रूप में अंकित किया।'' सा॰ को॰ पृ॰ 106.		आदर्शोन्मुख-यथार्थवादम्
आधुनिकी-करण	आधुनिक— अधुना भवः ठञ् (वाच॰) आधुनिक+करण	''आनन्द इन संस्कृतियों को आधुनिक सभ्यता के आघातों से सुरक्षित रखना चाहता है। या कम-से-कम उनके आधुनिकीकरण से पहले वह उनके जातीय लोक-गीतों, लोक गाथाओं, लोक-नृत्यों और लोक-वार्ताओं की शोध करके सुरक्षित कर लेना चाहता है।'' साहित्यानुशीलन पृ॰ 264.		आधुनिकीकरण

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आनन्दवाद	आनन्द- आ+नन्द—घञ् आनन्द+वाद	''आनन्द आत्मा का ही लक्षण है। जब हम शोकाकुल या दुःखी रहते हैं तो हम स्वस्थ नहीं रहते। लोग हमारी इस अवस्था को अस्वाभाविक समझ कर इसका कारण पूछते हैं। इसके विपरीत जब हम आनन्द में रहते हैं तो हम स्वस्थ रहते हैं। .... हिन्दी के सन्त-साहित्य, भक्ति-साहित्य और वर्तमान रहस्य-वाद-साहित्य में आनन्दवाद के सिद्धान्तों की स्थापना हुई है।'' सा० को० पृ० 112.	आनन्दवादम् आ० सा० पृ० 55.	
आन्तरिक/ अनुभूति	आन्तर— अन्तर्मध्ये भवः अण् (वाच०) आन्तर+अनुभूति	''आन्तरिक अनुभूति (रियल इम्मेनेन्स) का वास्तविक अर्थ ही होता है; आत्म-स्थापना से उपजी हुई आन्तरिक प्रक्रिया में प्राप्त सत्य।'' स० प्र० पु० नि० पृ० 148.		आन्तरिकानुभूति
आभाचक्र	आभा— आ+भा+अङ् (वाच०)	''आजकल यद्यपि कुलीनता पर विशेष बल नहीं दिया जाता, तथापि महाकाव्यों, में इतिहास-प्रसिद्ध लोकप्रिय नायक होने से उनमें लोकरंजकता आ जाती है और साधा–		परिवेषम्

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	चक्र— क्रियतेऽनेन कृ— घञर्थे क (वाच०) आभा + चक्र	रणीकरण या लोकहृदय से साम्य की भावना अधिक हो जाती है। इतिहास-प्रसिद्ध होने से एक लाभ यह है कि इसमें मानसिक दूरी का भाव आ जाता है। यह रस की बाधक बातों को दूर करने में सहायक होता है। अपने निकट के नायक में उनके दोषों का भी ज्ञान होता है, और नायकों के चारों ओर एक दिव्य <u>आभा चक्र</u> उपस्थित कर देता है।'' का० के० रू० पृ० 86.		
आमुख	आ + मुख + निच् + करणे अच् (वाच०)	''आमुख० दे० प्रस्तावना. रूपक में जहाँ नटी, विदूषक अथवा पारिपार्श्विक सूत्रधार के साथ अपने कार्य के सम्बन्ध में विचित्र वाक्यों का प्रयोग करते हुए इस तरह बात करे कि प्रस्तुत कथा सूचित हो जाय, वहाँ प्रस्तावना होती है। इसे <u>आमुख</u> भी कहते हैं।'' सा० को० पृ० 534.	आमुखम् श० ता० प 224.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आयाम	आ + यम् + घञ्, (वाच०)	''साहित्य मनुष्य का ही कृतित्व है और मानवीय चेतना के बहुविध प्रत्यन्तरों (रसपोन्सस्) में से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रत्युत्तर है। इसलिए हम आधुनिक साहित्य के बहुत-से पक्षों को या आयामों को केवल तभी बहुत अच्छी तरह समझ सकते हैं। जब हम उन्हें मानव मूल्यों के इस व्यापक संकट के संदर्भ में देखने की चेष्टा करें।'' मा० मू० और० सा० पृ० 10-11.		मानम्
आलोचना	आलोचन— आ + ल्युट् + निच् + लुट (वाच०)	'' आलोचना का उद्देश्य है कि कवि या लेखक की कृति में मानवहृदय कितना और किस सुन्दरता के साथ चित्रित हुआ है, इस तथ्य का उद्घाटन करना।'' सा० को० पृ० 121.		विमर्शनम्
आलोचना-शास्त्र	शास्त्र- शिष्यतेऽनेन— शास्त्र— ट्रन् (वाच०)	''इसे ऐतिहासिक दृष्टि नहीं कहते, और इस पर आधारित आलोचना-शास्त्र ... . वैज्ञानिक, शास्त्रीय, ऐतिहासिक, भौतिक, कुछ नहीं हो सकता; वह या तो शुद्ध धोखा		निरूपणशास्त्रम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	आलोचना + शास्त्र	हो सकता है,या-अगर उसके प्रचारक स्वयं उस पर विश्वास कर रहे हैं तो—कोरी आत्म-प्रवंचना ।'' आत्मनेपद पृ० 94.		
आवर्तन-कविता	आवर्तन— आ + वृत— आधारे ल्युट् (वाच)० कविता— कवे: कर्मयितु भावः तल् (वाच०) आवर्तन + कविता	''समाज के शैशव-काल में प्रत्येक लेखक आवश्यक रूप से कवि होता है क्योंकि स्वयं भाषा कविता होती है ······ अपने—आप में आवर्तन कविता का अव्यवस्थित रूप ही तो होती है ।'' पा० का० शा० की० प० पृ० 170.		आवर्त्तनकवित
आशा-वादिता	आशा- समन्तात् अश्नुते आ + अश—अच् (वाच०) आशा + वादी	''इंग्लैंड़ के उन्नतिशोल रोमैण्टिक कवियों—वर्डसवर्थ, शेली, कीट्स, बायरन की 'रोमैण्टिक' शैली ने हमारे काव्य साहित्य को एक नवीन काव्य-शैली तो अवश्य प्रदान की, लेकिन उसमें इंग्लैंड़ के 'रोमैण्टिक' कवियों की संजीवनी—शक्ति, आशावादिता और प्रगतिशीलता न आ पाई ।'' साहित्यानुशीलन पृ० 72.		आशावादित

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आस्तिकता	आस्तिक— आस्ति परलोक इति मतिर्यस्य ठक् (वाच०) आस्तिकता— (आ०)	''तीसरा (आजकी समीक्षा पद्धति के सामने पड़े तीन प्रमुख प्रश्नों में) है सामाजिक मूल्यों का निर्धारण और उनकी वास्तविक मर्यादा, उनका अनुपात (प्रोपोरशन),…. … ……. अथवा कला का महत्व पतनोन्मुखता पाये और उसकी मूलभूत आस्तिकता (फ़ेथ) कायम रहे ।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 188.	आस्तिकत श०ता०पृ०240.	
आस्था	आ+स्था—अङ (वाच०)	'' आस्था शब्द भी इसी प्रकार एक प्रकार पर संकेतित, लक्ष्य में विविध–रूपात्मक कहा जायगा । आस् और स्था, अस्तित्व और स्थिति-दोनों का उसमें ऐसा समन्वय है कि धर्म के आस्तिक से लेकर वैज्ञानिक युग के नास्तिक तक सब उसे स्वीकृति देते हैं ।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 25.	आस्था श०ता० पृ० 240.	
आस्थावान	दे०आस्था	''इसोसे सच्चा कवि या कलाकार किसी न किसी आद के प्रति आस्थावान रहेगा ही ।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 47.	आस्था श०ता०पृ० 240	आस्थावान्

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
आस्था—सम्पन्न	आस्था + सम्पन्न	''शेखर, आस्तिकता का प्रश्न क्यों उठाते हो जबकि वह तुरंत ही एक जाड्य का, एक स्थितिशोलता का आग्रह बन जाता है? हम आस्था—सम्पन्न रहें, इतना क्या तुम्हारे लिए भी काफ़ी नहीं हैं?'' आत्मनेपद पृ० 62.		आस्थासंपन्नन्
इति-वृत्तात्मकता	इतिवृत्त— इत्थं वृत्तम्— इदं प्रकारान्विते चरिते (वाच०)	परिस्थितियों की विषमता ने हमारे जागरण-युग को, ...और रंगीन स्वप्नों को इतिवृत्तात्मकता की वर्दी पर आदर्श के कवच पहनकर जीवन-संग्राम केलिए परेड़ करनी पड़ी ..... और अपनी पिछली दासता का प्रतिरोध-लेने लगे । सा०की०आ०त०अ०नि० पृ० 65.	इतिवृत्तम् क०सा० ओ० प० पृ० 180.	इतिवृत्तात्मकत्वम्
इन्द्रिय—चेतना	इन्द्रिय— इन्द्रस्य आत्मनो	''इसलिए उसने क्लासिकल कविता की ''बौद्धिकता'' और रोमाण्टिक कविता की 'भावना' दोनों का तिरस्कार		इन्द्रिय चेतन

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	लिङ्गं इन्द्र + व (वाच०) इद्रिय + चेतना	करके इन्द्रिय-चेतना (सेन्ष्युवालिटी) पर बल दिया और रोमांच (सेन्सेशन) को ही सर्वोपरि ठहराया । हि० का० की० प्र० पृ० 100.		
इन्द्रियज ज्ञान	इन्द्रियज— इन्द्रियाज्जायते— जन-डप् (वाच०) ज्ञान— विषयान् जानाति ज्ञ: अनिति अन: कम्म (वाच०) इन्द्रियज-ज्ञान	''जगत् का यह व्यक्त प्रसार ही भाव के संचरण का वास्तविक क्षेत्र है। इससे अलग मनुष्य कल्पना की कोई वास्तव सत्ता नहीं; वह असत् है। क्षणिक विज्ञानवादी ह्यूम का यह सिद्धान्त बहुत पक्का है कि इंद्रियज ज्ञान ही (इम्प्रशन्स्) सब प्रकार के ज्ञान के मूल हैं, वे ही विचार होते हैं जो इनके आधार पर संघटित होते हैं।'' सा० स० पृ० 128.		ऐन्द्रियज्ञानम्
इन्द्रिय-परायणता	परायण— परमयनं णत्वम् (वाच०)	''नाना विपत्तियों और कष्टों के भीतर से गुजरती हुई उनकी कर्तव्य-निष्ठा और सच्चा मनुष्यत्व पाठक को बल देता है, परन्तु उनकी इन्द्रियपरायणता, कूटबुद्धि और		ऐन्द्रियत

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	इन्द्रिय+ परायणता	कुटिल कर्म पाठक को दुर्बल और निरुत्साह बना देते हैं । सा० स० पृ० 94.		
इन्द्रियानु-भूति	इन्द्रिय + अनुभूति	''कविता चाहे किसी 'वाद' की हो पर उसमें इन्द्रियानुभूति और कल्पना दोनों का योग होगा । इन्द्रियानुभूति ग्रहण करने और कल्पना करने में लेखक के अपने व्यक्तित्व का हाथ बराबर रहेगा । हि० का० में० प्र० पृ० 125.		इंद्रियानुभूति
इन्द्रियार्थ-वाद	इन्द्रिय— इन्द्रस्य आत्मनो लिङ्गं इन्द्र + व (वाच०) अर्थ—	''कीट्स की कल्पना बहुत ही तत्पर थी इससे उनमें मूर्त्त-विधान (इमेजरी) का विलक्षण प्राचुर्य है । वे अपने इन्द्रियार्थवाद (सेन्ष्युवेलिज़म) केलिए प्रसिद्ध हैं; रहस्यवाद के साथ तो उनका नाम कहीं लिया ही नहीं जाता ।'' चिन्तामणि प० 138.		इन्द्रियार्थवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	अर्थ + अच् (वाच०) इन्द्रिय + अर्थ + वाद			
ईश्वरवाद	ईश्वर— ईश—वरच् (वाच०) ईश्वर + वाद	''उसके पहले यहूदियों और कैथलिक सम्प्रदाय के ईसाइयों में जो रहस्य-भावना प्रचलित थी वह ईश्वरवाद (तीईज़म्) के भीतर थी । चिन्तामणि पृ० 140.	ईश्वरवादम् वि० वि० पृ 25.	आस्तिकत्वम्
उक्ति	वच् भावे क्तिन् (वाच०)	''यह बात ठीक है कि हृदय पर जो प्रभाव पड़ता है, उसके मर्म का जो स्पर्श होता है, वह उक्ति ही के द्वारा ।'' र० मी० पृ 30	उक्ति पा० सा० द० पृ० 81.	
उक्ति—वैचित्र्य	उक्ति + वैचित्र्य वैचित्र्य- विचित्रस्य भाव:	गीतिकाव्यों में पुंजीभूत भावसत्य, दुःखान्त नाटकों के चिरन्तन संघर्ष और करुणा, गीति - कथाओं की गति और प्रवहमानता, मुक्तकों का उक्ति–वैचित्र्य और नीति-सत्य-		उक्तिवैचित्र्यम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	स्थान शब्द	विशेष
	व्यञ्ज् (वाच०)	इन सभी पुराने साहित्य-रूपों की शिल्पगत और वस्तुगत विशेषताओं को उपन्यास ने अपने व्यापक, प्रसार में ग्रहण किया था ।'' मा० मू० और० सा० पृ 163.		
उत्तेजना	उद्+तिज—णिच्—युच् (वाच०)	उस समय ....कि हमारी परम्परा महान् है इसमें सन्देह नहीं पर संक्रमण की स्थितियों में पता नहीं कहाँ पर, क्या छूट गया कि वह हमें एक खुमार भले दे दे, या एक उत्तेजना भी दे दे, पर आज वह अपने आप हम में प्राणदायक उष्ण रक्त का संचार कर सकने में अक्षम है । मा० मू० और० सा० पृ 63.	उत्तेजनम् श० ता० पृ० 279.	
उदात्ती-करण	उद्+अ+दत्त→ उदात्त मो० वि० उदात्त+करण	''कुछ लोग कह सकते हैं कि दैवी शक्ति की अनुभूति नैसर्गिक सुख है और रहस्यवाद की अनुभूति उदात्तीकरण की चरम सीमा है ।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 50.	उदात्तीकरणम् क०सा०ओ०प० पृ० 29.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
उदारवाद	उदार— उद्+आ+ रा—क (वाच०) उदार+वाद	उदारवाद का विकास आधुनिक युग की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के अन्तर्गत हुआ है। किन्तु इसका स्वरूप प्राचीन ग्रीक दर्शन और मध्यकालीन राजनीतिक विचारों में भी दीख पड़ता है। सा० को० पृ० 150.		लिबरलिसम् (उदारवादम्)
उद्गार	उद्गार— उद्+गॄ+ ॠदोरप् बाधित्वा घञ् (वाच०)	यदि ऐसी कविताओं में परमसत्ता के प्रति यदि उद्गार दृष्टिगोचर होते हैं, तो वे कविताएँ रहस्यवाद के अन्तर्गत आ सकती हैं, छायावाद की संज्ञा धारण नहीं कर सकती। हि० सा० और० वि० वा० पृ० 112.		हृदयोद्गारम्
उद्बोध-नात्मक	उद्बोधन— उद्+बुध्— घञ् (वाच०)	इसी समय स्वामी दयानन्द की गंगा को लक्ष्य करके लिखी हुई उद्बोधनात्मक कविता भी पढ़ी। आत्मनेपद पृ० 22.		उपदेशात्मकम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
उद्भावना	उद्भावन— उद्+भू— णिच्—ल्युट् (वाच॰)	प्रत्येक युग का रचनात्मक साहित्य ऐसी आलोचना की उद्भावना करता है जो उसके अनुरूप होती है । न॰ सा॰ न॰ प्र॰ पृ॰ 22.	उद्भावनम् श॰ ता॰ पृ॰ 286.	
उद्वेग	उद्—विज— घञ् (वाच॰)	या यदि रह भी गयी थी तो ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे अन्तरात्मा केवल कुछ अव्यावहारिक अन्तर्मुखी स्वप्न-दर्शियों का अनावश्यक मानसिक उद्वेग बनकर रह गयी है जिसका बाह्यार्थ से कुछ मेल नहीं बैठ पाता । मा॰ मू॰ और॰ सा॰ पृ॰ 20.	उद्वेगम् श॰ ता॰ पृ॰ 288.	
उन्मेष	उन्मेष— उद्+मिष— घञ् (वाच॰)	लोग कभी कहते हैं कि 'वीर रस की कोई कविता सुनाइये', कभी कहते हैं 'श्रृंगार रस की कोई कविता सुनाइए,' इसका मतलब यही है कि कभी उनमें उत्साह का उन्मेष रहता है, कभी प्रेम का, कभी किसी और भाव का । चिन्तामणि पृ॰ 105.		विकासम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
उपजीव्यता	उपजीव्य — उप + जीव — ण्यत् (वाच॰)	''उनकी रचनाओं के व्यासंग में हिन्दी आत्म-निरीक्षण और अपनी उपजीव्यता केलिए परीक्षण करती जान पड़ती है ।'' 'साहित्यानुशीलन' पृ॰ 96.	उपजीव्य श॰ ता॰ पृ॰ 292.	
उपदेश — काव्य	उपदेश — उप + दिश् + घञ् → (वाच॰) उपदेश + काव्य	उपदेश–काव्य –दे॰ 'प्रबोधक काव्य' और 'दृष्टान्त काव्य' । प्रबोधक काव्य कोई निश्चित काव्यरूप नहीं बल्कि शैली, विषय-वस्तु और उद्देश्य की दृष्टि से एक विशिष्ट काव्य प्रकार है । अंग्रेज़ी में इसे डाइडैक्टिव पोएट्री कहा जाता है । ऐसा काव्य, जिसका उद्देश्य सीधे-सीधे उपदेश देना और पाठकों का सुधार करना हो और जिसका कलात्मक पक्ष उसके नैतिक या उपदेशात्मक पक्ष से बिलकुल दब गया हो, प्रबोधक काव्य कहा जाता है । सा॰को॰ पृ॰ 524.		उपदेश काव्यम्
उपदेशवादी	उपदेश — उप + दिश —	इसके अनन्तर अज्ञेय हिन्दी साहित्य में प्रतीक पुरुष की उद्भावना तथा निष्क्रांति का एक चित्र अंकित करते हैं ।		उदबोधक म्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान-शब्द	विशेष
	घञ् (वाच॰) उपदेश + वादी	.... उपदेशवादी, रोमेण्टिक तथा प्रगतिवादी तीनों युगों के अपने–अपने प्रतीक-पुरुष अथवा नायक रहे । प्रयोगवाद पृ॰ 76.		
उपपत्ति	उप + पद—क्तिन् (वाच॰)	एक विस्तृत उपपत्ति : अगर मैंने किसी की बलि देने का निश्चय कर ही लिया तो मुझे केवल अपने को यह विश्वास दिलाना शेष रह जाता है कि मैं उससे प्रेम करता हूँ । आत्मनेपद पृ॰ 256.	उपपत्ति श॰ त॰ पृ॰ 294.	
उपयोगिता-वाद	उपयोगिता— उप + युज्— घिणुन् उपयोगिन् तस्य भाव तल् (वाच॰) उपयोगिता + वाद	किसी वस्तु, विचार, अथवा कार्य का महत्व आँकने केलिए उपयोगिता की कसौटी बहुत दिनों से चली आ रही हैं । किसी कालविशेष के सामाजिक उद्देश्यों के अनुरूप ही उपयोगिता के प्रतिमान भी बदलते रहे हैं, पर उपयोगिता का सिद्धान्त अक्षुण्ण रहा है । उपयोगितावाद को साहित्य में सोद्देश्यतावाद की संज्ञा भी दी गयी है । सा॰ को॰ पृ॰ 172.	उपयोगित श॰ ता॰ पृ॰ 296.	उपयोगितावादम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
उपयोगी-कला	उपयोगिन्— उप+युज— घिणुन् (वाच०) कला— कलयति कलते वा कर्तरि अच् (वाच०) उपयोगी कला	कलाओं का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जाता है। उपयोगिता भौतिक सुख से संबन्धित है, सौन्दर्य मानसिक से। जिन कलाओं में उपयोगिता का प्राधान्य हो वे उपयोगी कलाएँ कहीं जायेंगी। सि० और० अ० पृ० 63.	सोपयोगकला पा० सा० द०	
उपलब्धि	उपलब्धि— उप+लभ— क्तिन् (वाच०)	इस प्रकार आध्यात्मिकता में वह मनुष्य–पूजा भी थी जो हमारी सांस्कृतिक परम्परा की श्रेष्ठतम उपलब्धि है और मनुष्य की वह अपमानना भी थी जिससे सारा मध्ययुग बहुत प्रयास करने पर भी छुटकारा नहीं पा सका था। मा० मू० और० सा० पृ० 72.	उपलब्धि श० ता० पृ 297.	सिद्धि
उपहास—काव्य	उपहास— उप+हस—	अरस्तू ने अपने काव्यशास्त्र में काव्य को अनुकृति माना है तथा उद्देश्य तथा अनुकरण की प्रक्रिया के भेद से उसने काव्य का वर्गीकरण किया है। दुःखान्त नाटक और महा-		हास्यकवित

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	भावे— घञ् (वाच॰) उपहास + काव्य	काव्य का उद्देश्य अभिजात वर्ग के लोगों के जीवन और चरित्र को काव्य में निबद्ध करना था। इसके प्रतिकूल सुखान्त नाटक और उपहास-काव्य निम्न श्रेणी के लोगों के क्रिया कलापों का अनुकरण करते थे। सा॰ रू॰ पृ॰ 21.		
उपाख्यान	उप + आ + ख्या—ल्युट् (वाच॰)	अनेक आख्यानों एवं उपाख्यानों का 'जय' नामक इतिहास ग्रंथ (वर्तमान 'महाभारत' के मूल रूप) में संग्रह होने के कारण ही परिवर्धित महाभारत को आख्यान-काव्य का नाम प्राप्त हुआ होगा। सा॰ को॰ पृ॰ 96.	उपाख्यानम् श॰ ता॰ पृ॰ 300.	
उपालंभ-काव्य	उपालम्भ— उप + आ — लभ्—घञ् (वाच॰) उपालंभ + काव्य	भक्ति-काव्य के अन्तर्गत उपालंभ काव्य का प्रमुख आधार कृष्ण का मथुराप्रवास है। कृष्ण गोकुल छोड़कर मथुरा जाते हैं। गोपियाँ बाद में राधा भी, गोप, यशोदा, नन्द, ग्वाल—बाल, सभी उनके वियोग में दुःखी और व्यथित हो जाते हैं। सा॰ को॰ पृ॰ 179.		उपालंभकवित

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
उपासना	उपासन— उप+अस— विक्षेपे आधारे ल्युट् (वाच०)	जो वस्तु हमसे अलग है, हमसे दूर प्रतीत होती है, उसकी मूर्ति मन में लाकर उसके सामीप्य का अनुभव करना ही उपासना है। र० मी० पृ० 21.	उपासन श० ता० पृ० 372.	
ऊनार्थ	ऊन— ऊन – हानौ अच् (वाच०) अर्थ— अर्थभावकर्म्मादौ यथाथयम् अच् (वाच०) ऊन+अर्थ	इतना ही नहीं, हमने जो मान लिया है, उसपर भी बराबर कायम नहीं रहते, अर्थ थोड़ा उन्नीस बीस होता ही रहता है और फिर ये ऊनार्थ और अध्यर्थ शब्द का संस्कार या इतिहास बनकर उसमें एक और नया अर्थ जोड़ देते हैं। आत्मनेपद पृ० 161.		ऊनार्थम्
ऊर्जस्वीकरण	ऊर्जस्विन्— उर्ज्ज—असुन् — ततोऽस्त्यर्थे विनि (वाच०) ऊर्जस्वी+करण	अत: लौकिक प्रेम परिस्थिति बदलते ही उदात्त बन जाता है, उसकी ऐन्द्रिक वासना का ऊर्जस्वीकरण हो जाता है और हृदय में आनन्द का सागर लहराने लगता है। सा० शा० पृ० 29.	ऊर्ज्जस्वि श० ता० पृ० 318.	ऊर्जस्वीकरणम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
ऋजुता	अर्जयतिगुणान् अर्ज्ज-भावे तल् (वाच॰)	मेरा विश्वास है कि अन्त में ऋजुता उसमें भी आती है और वह शालीनता स्वातंत्र्य का प्रतिबिंब है । आत्मनेपद पृ॰ 66.	ऋजुत श॰ ता॰ पृ॰ 322.	
एकपात्रीय नाटक	एक—इण—कन् (वाच॰) पात्रीय— पात्रे साधु (वाच॰) एक+पात्रीय नाटक	"एकपात्रीय नाटक उसे कहते हैं, जो इस प्रकार लिखा गया हो कि केवल एक अभिनेता द्वारा उसका अभिनय सम्भव हो सके ।" सा॰ को॰ पृ॰164.		एकपात्रीय नाटकम्
एकसूत्रता	सूत्र—सूत्र—अच् (वाच॰) एक+सूत्रता	"आगे चलकर तो महाकवि भवभूति ने "एकोरस: करुण एव" कहकर एक मात्र करुणा को ही रस की संज्ञादे दी । क्योंकि यही करुणा समस्त चेतना-पुंजों में एकसूत्रता स्थापित करती है, यही विश्वबन्धुत्व का मंगलाचरण है ।" सा॰ शा॰ पृ॰ 154.		एक सूत्रता

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
एकांकी		आधुनिक एकांकी पाश्चात्य साहित्य की देन है ।...... इस प्रकार स्वरूप के एतिहासिक विकास—आवश्यकता, और प्रयोग की दृष्टि से स्पष्ट है कि ऐकांकी नाटक साहित्य का वह नाट्य-प्रधान रूप है, जिसके माध्यम से......सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते हैं । सा० को० पृ० 184-85.	एकांकम् श०ता० पृ०335.	
एकांग-दार्शता	एकाङ्ग— एकं प्रधानं सुन्दर त्वेनाङ्ग- मस्य दर्शिता- दृश्-णिच्-वत एकाङ्ग+दर्शिता	इसी प्रकार की एकांगदर्शिता के कारण कवि के कर्मक्षेत्र से सहृदयता धक्के देकर निकाल दी गई और कवि का कर्मक्षेत्र जीवन के कर्मक्षेत्र से काटा जाने लगा । र० मी० पृ० 82.		एकपक्षीयत
एकांगिकता	दे ० एकाङ्ग	यदि अपनी विचार—पद्धति में समीक्षक इस नये ज्ञान-क्षेत्र के प्रति जागरूक नहीं रहता तो वह अनजाने एकांगिकता का शिकार हो जाता है । मा० मू० और० सा० पृ० 154.		एकांगिकत

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
एकानुभूति	एक + अनुभूति	''यह परिष्कृति ही हमें वह दृष्टि देती है जिससे हम भावनात्मक स्तर पर एकानुभूति (मोनोड़िक) को व्यापक स्तर पर ग्रहण करते हैं और देखते हैं।'' न०प्र० पु० नि०. पृ० (128)		एकानुभूति
ऐतिहासिक उपन्यास	ऐतिहासिक– इतिहासादागत: इतिहासं वेत्त्यधीते वा ठक् (वाच०) ऐतिहासिक– उपन्यास	इतिहास के तथ्यों से लेकर विश्वसाहित्य में अनेक उच्चकोटि के उपन्यास लिखे गये है। इस प्रकार की रचनाएं ज्ञात अथवा परम्परा से स्वीकृत तिथियों और तथ्यों की सहायता से किसी युगविशेष का स्वरूप खडा करती है। ....हमारे देश में प्राचीनकाल राजपूतकाल, मुगलकाल आदि से संबन्धित ऐतिहासिक उपन्यसों की रचना हुई है। सा० रू० पृ० 75.		चरित्राख्यायिक
ऐति–हासिकता	दे० ऐतिहासिक	वस्तु-सत्य के प्रस्तुत होने से और उसकी ऐतिहासिकता (पूर्व परिचय) होने से हो समसामयिकता के स्तर पर हम एक ओर तो अतीत और भविष्य दोनों को भोग के क्षण	ऐतिहासिक श० ता० पृ० 342.	चरित्रपरत

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		में भोगते हैं और दूसरी ओर हम वस्तुसत्य के आन्तरिक तत्वों को पुनः संगठित करने का प्रयास करते हैं। न० प्र० पु० नि० पृ० 216.		
औदात्य		''औदात्य ? अभिव्यंजना के वैशिष्टय और उत्कर्ष का नाम है और यही एकमात्र ऐसा आधार है जिसके अवलम्ब से महानतम कवियों एवं लेखकों ने गौरव लाभ किया है।'' पा० का० शा० की० प० पृ० 148.		औदात्यम्
औद्योगिक	उद्+यज्—धञ् (वाच०)	एक ओर हम मशीनों को राक्षसी सत्ताएँ भी मानते थे और पश्चिमी तौर–तरीकों को हानिकर भीं मानते थे। और दूसरी ओर हम तुर्की और जापान ऐसे राष्ट्रों को अनुकरणीय भी मानते थे जिन्होंने सामाजिक क्षेत्र में या औद्योगिक क्षेत्रों में यूरोप को भी पछाड़ने में सफलता पा ली थी। मा० मू० और ० सा० पृ० 57.		व्यावसायिकम्

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
औपन्या-सिक	उपन्यास— उप+नि+ अस —घञ् (वाच०)	जहाँ तक मानव परिवेश बाह्य परिस्थिति, परम्परा और पृष्ठभूमि का सम्बन्ध है, इस धारा ने औपन्यासिक परम्परा को निःसन्देह एक नया मोड़ दिया। मा० मू० और० सा० पृ० 167.		नोवल (परम्पर)
कथाकाव्य	कथा— कथ—कथने (वाच०) कथा+काव्य	''प्रारंभिक वरियुग में प्रचलित गाथाचक्रों से ही विकसनशील वीरकाव्य (महाकाव्य), कथाकाव्य और इतिहास-पुराण-इन तीनों काव्य-रूपों का विकास हुआ। वे गाथाचक्र प्रधानतया तीन प्रकार होते थे -(१) वीर-भाव प्रधान (२) रोमांसिक तत्वों से युक्त प्रेमभावना प्रधान और (३) लोक-विश्वासों और निजंधरी पात्रों से सम्बन्धित तथा धर्मभावनाप्रधान।'' सा० को० पृ० 201.		कथाकाव्यम्
कथा—विच्छेद—वक्रता	विच्छेद— वि+छिद— भावे घञ् (वाच०)	''कथाविच्छेद—वक्रता -दे० प्रबन्ध वक्रता, तीसरा नियामक। कथाविच्छद-वैचित्र्य से प्रबन्ध में एक ऐसी सुन्दरता आ जाती है, जो पूर्वोत्तर कथा-निर्वाह के द्वारा		कथाविच्छंदवक्रत

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	वक्रता वकि कौटिल्ये + रन् श० क० कथा + विच्छेद + वक्रता	कदापि नहीं आ सकती । .... कथाविच्छेद- वैचित्र्य के द्वारा प्रबन्ध -वक्रता के उदाहरण-रूप में संस्कृत के महाकवि माघ के 'शिशुपालवध' महाकाव्य को लिया जा सकता है ।'' सा० को० पृ० 203, 423.		
कथोपकथन	उपकथनम् (आ०) कथा + उपकथन	''किसी उपन्यास या नाटक में कथावस्तु को आगे ले जाने केलिए पात्रों के संवाद के रूप में जो प्रणाली अपनायी जाती है उसे कथोपकथन कहते हैं ।'' का० के० रू० पृ० 36.	कथोपकथनम् श० ता० पृ० 374.	
करुण गीति	करुण— करोति मनः आनुकूल्याय कृ—उनन् । (वाच०)	हिन्दी में एलिजी केलिए प्राय: करुणगीति का प्रयोग होता है । सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ से अंग्रेजी में एलिजी-मृत्यु और शोक का गीत-बनने लगी, अन्यथा प्राचीन ग्रीस में युद्ध और प्रेम की अभिव्यक्ति इसमें होती थी । सा० को० पृ० 296.	विलापकाव्यम् म० सा० च० पृ० 235	शोकगीति

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	गीति — गै भावे क्तिन् (वाच ०) करुण + गीति			
कर्मकाण्ड	कर्मणां कर्तव्यता-प्रतिपादकं काण्डम् (वाच॰)	इस बात से दो बातें सिद्ध होती हैं: पहली यह कि आधुनिकता कोई आरोपित कर्मकाण्ड अथवा 'कल्ट' नहीं है। न॰ प्र॰ पृ॰ नि॰ पृ॰ 37.	कर्मकाण्डम् श॰ ता॰ पृ॰ 400.	
कला	कला— कलयति कलते वा कर्तरि अच् (वाच॰)	आधुनिक कला और साहित्य के क्षेत्र में कलावाद की स्थिति उपयोगितावाद के प्रतिलोम अर्थ में उसके प्रतिपक्षी की तरह दृष्टिगत होती है। एक पक्ष द्वारा कलावाद को संकीर्ण एवं व्यक्तिनिष्ठ कहा जाता है तो दूसरे पक्ष की ओर से उपयोगितावाद को स्थूल सामाजिकता का आग्रही बताया जाता है। सा॰ को॰ पृ॰ 204.		कल

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
कल कृति	कला— कलयति कलते वा कर्तरि अच् (वाच०) कृति— कृ + क्तिन् (कृतृ व्यापारे (वाच०) कला + कृति	''क्रोचे ने कला और कलाकृतियों में अन्तर किया है । .... कलाकृतियाँ (काव्य, चित्र, मूर्ति आदि) उस आन्तरिक स्वयंप्रकाशज्ञानजन्य अभिव्यक्ति को बाह्य रूप और स्थायित्व देकर पुनः ज़ाग्रत करने की साधन स्वरूप हैं । सि० और० अ० पृ० 280		कलाकृति
कलात्मकता	दे० कला	''यद्यपि यह एक प्रेम—कथा है - पर इसके ताने - बाने में ग्राम - जीवन का यथार्थ इतनी सूक्ष्म संवेदनशील कलात्मकता से गूँथा हुआ है कि सामन्तशाही उत्पीड़न और अनाचार का सजीव खाका आँखों के आगे खिंच जाता है ।'' साहित्यानुशीलन. पृ० 225.		कलात्मकत्वम्
कलात्मक संवेदनीयता	दे० संवेदना	वास्तव में लोक के विविध रूपों की एकता पर स्थित अनुभूतियाँ लोक - विरोधिनी नहीं होती; परन्तु एकान्तिक		

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		रूप के कारण अपनी व्यापकता केलिए, वे व्यक्ति की कलात्मक संवेदनीयता पर अधिक आश्रित हैं। सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 97.		कलात्मक-प्रेषणीयत
कलारसिक	रसिक— रस वेत्ति ठन् (वाच०) कला + रसिक	निःसन्देह यह एक कलारसिक का दृष्टिकोण नहीं था इसी कारण उस विश्लेषण में भी कला की अन्तःप्रेरणा की व्याख्या कई दिशाओं में वैसी ही एकांगी हो गयी जैसी मार्क्स की व्याख्या। मा० मू० और० सा० पृ० 156		कलारसिकन्
कलावाद	कला + वाद	''आधुनिक कला और साहित्य के क्षेत्र में कलावाद की स्थिति उपयोगितवाद के प्रतिलोम अर्थ में उसके प्रतिपक्षी की तरह दृष्टिगत होती है। एक पक्ष द्वारा कलावाद को संकीर्ण एवं व्यक्तिनिष्ठ कहा जाता है तो दूसरे पक्ष की ओर से उपयोगितावाद को स्थूल सामाजिकता का आग्रही बताया जाता है। कलावादी कला को लोकातीत वस्तु, कलाकार को लोकोत्तर प्राणी और कलाजन्य	कलावादि आ० सा० पृ० 78.	कलावादम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान-शब्द	विशेष
		आनन्द को अलौकिक आस्वादयुक्त एंव समाजनिरपेक्ष मानता है,.........साधन समझता है।'' सा० को० पृ० 225.		
कलासृष्टि	सृष्टि — सृज्-क्तिन् (वाच०) कला + सृष्टि	काव्यरचना का — किसी भो कलासृष्टि का अधिकार तभी आरंभ होता है जब व्यक्तित्व का संपूर्ण विलयन हो जाय, यह मानना तो दूर की बात रही। आज का कवि साधारणतया इतना भी नहीं मानता.. ......व्यक्ति को बृहत्तर इकाई में विलीन कर देता है। आत्मनेपद पृ० 33.		कलासृष्टि
कल्पना-जीवी	कल्पना— कृप्-णिच् भावे युच् (वाच०)	किन्तु प्रयोगवादी समीक्षकों की विवेचना में समस्त पूर्ववर्ती संस्कृति को रूढ़िवादी तथा साहित्य को कल्पनाजीवी और व्यक्तिवादी कहा गया है तथा नये प्रयोगवादो साहित्य को नये यथार्थ की दीप्ति से दीपित बताया गया है। प्रयोगवाद प० 79.		संकल्पजीवि

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	जीवी— जीव – णिनि (वाच०) कल्पना + जीवी			
कविता	कवेः कर्म्मयितु- र्भाव तल् (वाच०)	"पर कविता कुछ वस्तुओं और व्यापारों को मन के भीतर मूर्त रूप में लाने और प्रभाव उत्पन्न करने केलिए कुछ देर रखना चाहती है।" र० मी० पृ० 35.		कवित पा०सा०द० 392.
कामप्रवृत्ति	काम— कम· घञ् प्रवृत्ति— प्र + वृत—क्तिन् (वाच०) काम + प्रवृत्ति	"........ मशीन की सभ्यता ने मानव के मन में ऐसी ग्रांथियाँ डाल दी हैं उसकी सामाजिक-चेतना और काम–प्रवृत्ति दोनों को इतना विकृत कर दिया है कि वह भयानक उलझन में पड़ गया है। मा० मू० और० सा० पृ० 46.		कामप्रवृत्ति भौतिकवादी
कायावादी	काच— कः प्रजापतिः	प्रयोगवादीः मायावादी रचना को वे बुद्धि-विलास का आधार मानते है तथा प्रयोगवादी कायावादी रचना में नये		

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	अण (वाच०) काय + वादी	रसों की उत्सर्जना लक्षित करते हैं । प्रयोगवाद पृ० 134.		
काल-दूषण	काल— कल् संख्याने, प्रचाद्यच् ततः प्रज्ञा घण् (वाच०) दूषण— दूषि—भावे—ल्युट् (वाच०) काल + दूषण	''प्रबन्ध काव्य, कथा साहित्य, उपन्यास साहित्य आदि । कालदूषण का बडा ध्यान रखना पड़ता है । संभावना के साथ औचित्य का भी पूरा ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है । जाडों में तनजेब का कुर्ता और गर्मी में ओवर-कोट (यदि वह ठंडे,प्रदेश में न हो) पात्र की विक्षिप्तता और उससे बढ़कर लेखक की विक्षिप्तता का परिचय देगा ।'' का० के० रूप० पृ० 166.	कालातिक्रमम् श० ता० पृ० 449.	
काल्पनिक यथार्थता	काल्पनिक— कल्पनायाः आगतः ठञ् यथार्थ— अर्थमनतिक्रम्य (वाच०)	यद्यपि यह हम कह चुके कि ब्रह्मा का युग हमारी उद्-भावना की पकड़ से बाहर की चीज़ है— वह काल्पनिक यथार्थता भी नहीं हो सकती । आत्मनेपद पृ० 101.		काल्पनिक यथार्थम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
काव्य–दोष	दोष— दुष्—भावे करणे घञ् (वाच०) काव्य + दोष	संस्कृत साहित्य में प्रारंभ से ही दोष–विवेचन मिलता है। मम्मट ने काव्यप्रकाश में दोषों का अधिक स्पष्ट विवेचन किया है। इन्होंने तीन प्रकार के काव्यदोष माने हैं:- शब्द–दोष, अर्थ–दोष, रस-दोष। सा० को० पृ० 256.		काव्यदोषम्
काव्य-परम्परा	काव्य + परंपरा	कोई भी साहित्यिक कृति या धारा अपने में निरपेक्ष निःसंग असंपृक्त कृति या धारा नहीं होती। उसके पीछे एक लम्बी काव्य-परंपरा होती है। मा० मू० और० सा० पृ० 145.		काव्यपरंपर
काव्य-शिक्षण	काव्य + शिक्षण	मैं मानता हूँ कि उस दिन अपने काव्य-शिक्षण का एक सोपान मैं पार कर गया। आत्मनेपद पृ० 53.		काव्यशिक्षणम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथका नाम	समान शब्द	विशेष
काव्य-श्रृंखला	श्रृंखला—श्रृंगात् प्राधान्यात् स्खल्यते अनेन पृषो (आ०) काव्य + श्रृंखला	एक कला-कृति पहले रूप में एक संचित शास्त्रीय परम्परा, जातीय सौन्दर्य-बोध और परम्परागत काव्य-श्रृंखला की विशिष्ट कड़ी होती है। मा० मू० और सा० पृ० 146.		काव्यपरंपर काव्यश्रृंखल
काव्यालोचन	काव्य + आलोचन	''छायावाद युग ने नये काव्य की सृष्टि के साथ एक नये काव्य-चिंतन की, नये काव्यशास्त्र नये काव्यलोचन की भी नींव, रखी तो यह स्वाभाविक ही था।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 1.	काव्य समीक्षा का०सा० पृ०।	काव्यनिरूपणम्
कीर्त्तन	कृत—कीर्त्ता देशः सौत्र—कीर्त्त वा भावे ल्युट् (वाच)०	''कीर्त्तन — यह सामूहिक गीत का एक रूपान्तर है। इसके दो रूप हैं — लोकप्रिय अथवा असाम्प्रदायिक तथा संकीर्ण अथवा साम्प्रदायिक। चैतन्यदेव के कारण यह रूप अधिक लोकप्रिय हुआ।'' सा० को० पृ० 263.	कीर्त्तनम् श० ता० पृ० 466.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
कुण्ठा	कुण्ठ—कुठि वैकल्ये अच् (वाच०)	उसकी आन्तरिक कुण्ठा और बाह्य सीमाएँ इस सीमा तक उसे पंगु और क्लीब बना रही थीं कि नियति का साक्षात्कार करने में अग्रसर होना तो दूर......लज्जाजनक प्रदर्शन करने केलिए विवश था । मा० मू० और० सा० पृ० 38.	कुण्ठ श० ता० पृ० 476.	
कुण्ठावादी	कुण्ठा + वादी	''किसीने लघु-मानव को छोटा आदमी कहा, तो दूसरे ने कर्दमवासी और तीसरे ने 'डेविल्स ऐडवोकेट' और चौथे ने 'असुरवादी' और पाँचवें ने कुण्ठावादी ।'' न० प्र० पु० नि० पृ 101.		कुण्ठावादी
कुत्सित-स्मृति	कुत्सित कुत्स्—कर्मणि क्त (वाच०) स्मृति— स्म-क्तिन् (वाच०) कुत्सित + स्मृति	''मानव मुक्ति की गाथा यदि वास्तव में देखी जाये तो इतिहास की यह कुत्सितस्मृति (बैड मेमॅरी) के शिकंजे में कसकर टूटती रही है ।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 57.	कुत्सित श० ता० पृ० 480.	अभिशप्तस्मृति

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
कृतिकार	कृति — कृ—क्तिन् कृतिकर (वाच०) कृतिसंख्यातुल्या विशंति संख्या: करा यस्य (वाच०)	और अगर एक कृति के मूल्यांकन में कृतिकार के जीवन का ब्यौरा अप्रासंगिक है, तो दूसरी कृति के साथ वैसा क्यों नहीं—क्यों न ऐसे ब्यौरे को साहित्यिक प्रतिभा में से अलग कुछ माना जाय? आत्मनेपद पृ० 79.	ग्रंथकर्त्तािव् श० ता० 602.	कर्त्ता
केन्द्रबिन्दु	केन्द्र — वृत्तस्य मध्यं किल केन्द्रमुक्तम् (वाच०) बिन्दु — बिदि—उ. (वाच०) केन्द्र + बिन्दु	इस प्रकार चेतना की वह परिधि जो संसार है—वस्तुत: पूर्णतया विश्रृंखल और विघटित हो गया था और उसका केन्द्रबिन्दु मनुष्य अन्दर से बिलकुल रिक्त था। मा० मू० और० सा० पृ० 30.	केद्रबिंदु जीव साहित्य- चरित्रम् पृ० 190.	
केन्द्रीकरण	दे० केन्द्र केन्द्र + करण	अपनी साधना में संलग्न मनीषियों को वैज्ञानिक-सत्यों की अनुभूति आकस्मिक रूप से हुई है। व्यवस्थित प्रयोगों		केन्द्रीकरणम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		का सम्पादन तो मानसिक शक्ति के केन्द्रीकरण केलिए ही होता है। प्रयोगवाद पृ० 108.		
कोश—निर्माण	कोश — कुश् (ष्) आधारादौ धञ् कर्तरि अच् वा (आ०) निर्माण— निर्+मि—भावे ल्युट् (वाच०) कोश+निर्माण	मैंने कई एक प्रकार के कामों में हाथ लगाया है, सभी में न्यूनाधिक दक्षता दिखाई है——रेखांकन, चित्रकारी,.... ....धर्म-तत्व-विवेचन, कोश-निर्माण, ...गृह-सज्जा, बुनाई—और रेल्वे स्टेशन पर बैठकर लम्बे और उबानेवाले पत्रों का लेखन! आत्मनेपद पृ० 215.	कोशम् श० ता० पृ० 547.	कोशनिर्मिति
क्षणवाद	क्षण+क्षणोति दुःखं क्षण+अच् (वाच०) क्षण+वाद	...........अनुभूति के किसी न किसी गहरे क्षण में ऐसी चिनगारी की अकलुष उष्णता का अनुभव होता है, परन्तु अभी सामाजिक धरातल पर उसे वस्तुगत यथार्थ के रूप में व्यक्त कर पाना सम्भव नहीं हो पा रहा है।		क्षणवादम्

हिन्दी—शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		इस क्षण के प्रति तीव्र आकर्षण को क्षणवाद की अभिघा दी गई है । प्रयोगवाद पृ० 128.		
क्षणानुभूति	क्षण+अनुभूति	एकांकी का स्पर्श अनेक भावनाओं और मानसिक प्रक्रियाओं पर रहने के कारण नाटककार की अभिरुचि उसे विभिन्न आकार और स्वरूप प्रदान करती है । नाटककार की कोई भी तीव्र अनुभूति क्षणानुभूति के प्रदर्शन केलिए उसका स्वरूप अपने अनुसार निर्धारित कर सकती है । प्रयोगवाद पृ० 175.		क्षणिकानुभूति
खंडकाव्य	खण्ड— खडि—घञ् (वाच०) खण्ड+काव्य	यह प्रबन्धकाव्य का ही एक विशेष रूप है । संस्कृत में सर्वप्रथम रुद्रट ने प्रबंधकाव्य के दो रूपों—महान् काव्य (महाकाव्य) और लघु काव्य (खण्डकाव्य) पर मौलिक ढंग से विचार किया है । ....विश्वनाथ कविराज के अनुसार किसी भाषा या उपभाषा में सर्गबद्ध एवं एक—कथा का निरूपक पद्यग्रंथ जिसमें संधियाँ न हों, 'काव्य' कहलाता है	खण्डकाव्यम् म० सा० च० पृ०	

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		और काव्य के एक अंश का अनुसरण करनेवाला खण्डकाव्य होता है । सा० को० पृ० 246.		
खण्ड-सम्मेलन	सम्मेलन— सम्—मेलन अम् मिल् मो० वि० खण्ड+सम्मेलन	प्रगतिवादियों ने भी उसमें भाग लिया था अवश्य; और उसके दौरान में प्रगतिशील लेखक संघ का एक अलग खण्ड-सम्मेलन भी किया था जिसमें सदस्येतर लोग नहीं बुलाये गये थे; पर ...... करना चाहते थे । आत्मनेपद पृ 101.		उपसम्मेलनम्
खल-नायक	खल— खल–अच् अर्द्धर्चा (वाच०) नायक— नी—ण्वुल् (वाच०) खल+नायक	वकील वह नहीं हुआ, सिनेमा एक्टर हो गया, खलनायक की भूमिका में प्रसिद्ध भी हुआ. लेकिन दस-ग्यारह वर्ष बाद जब कलकत्ते के एक स्टूडियो में उससे फिर साक्षात्कार हुआ तब उसकी हल्की मुस्कराहट में गुण्डई बिलकुल न थी, एक अनुभव-दग्ध विषाद का ही भाव था । आत्मनेपद पृ० 190.		खलनायकन्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
गतानुगतिक	गतानुगत— गतस्य (गमनस्यानुगतम् अनुगमनम्) गतानुगतमस्य ठन् (वाच०)	पूँजीवाद भी उस समय विकास की नयी दिशाएँ प्रदान कर रहा था, और गतानुगतिक अन्धपरंपराओं से निकाल-कर विश्व संस्कृति के एक नये स्तर पर स्थापना कर रहा था। मा० मू० और० सा० पृ० 40.	गतानुगतिक श० ता० पृ० 576.	
गतिरोध	गति— गम भावे क्तिन् रोध— रुध—घञ् (वाच०) गति+रोध	किन्तु इस संकट को लेकर निराशा, गतिरोध, अनिवार्य विघटन आदि की जो बातें कही गयी हैं वे स्थिति का एक ही पक्ष प्रस्तुत कर पाती हैं। मा० मू० और० सा० पृ 101.	गत्यवरोधम् श० ता० 577.	
गतिशील	गति— गम भावे क्तिन् (वाच०) शील— शील+अच् (वाच०)	''इन नये सन्दर्भों के परिप्रेक्ष से ही वह उनके गतिशील (डायनमिक) आरोहावरोह से कुछ नयी दृष्टि पाता है—सन्दर्भों का नया अर्थ पाता है, दृष्टियों की नयी मर्मान्तक भाववेदना पाता है और इन सबके साथ नये सम्बन्धों की		चलनात्मकम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	गति+शील	इस स्थिति में वह नितान्त व्यक्तिगत नैतिक निर्णयों के आधार पर कुछ मूल्यों को आर्जित करता है।'' न० प्र० पु० नि० प० 142.		
गल्प		''आजकल की हिन्दी-कहानियाँ, जिनको 'गल्प', 'आख्यायिका' 'लघुकथा' भी कहते हैं, भारत की पुरानी कहानियों की ही संतति हैं; किन्तु विदेशी संस्कार लेकर आई हैं।'' का० के० रू० पृ० 200.	चेरुकथा आ० सा० पृ० 62.	
गवेषणात्मक आलोचना	गवेषण— गवेष भावे युच्- अन्वेषणे (वाच०) गवेषणात्मक आलोचना	''सरस्वती'' में परिचयात्मक, व्याख्यात्मक एवं तुलनात्मक निबन्ध प्रकाशित होते थे। कभी-कभी दोषनिरूपण की प्रवृत्ति इन लेखों में अत्यन्त बलवती दिखायी देती है। बाबू श्यामसुन्दरदास तथा मिश्रबन्धुओं ने इस काल में ऐतिहासिक एवं गवेषणात्मक आलोचना को आगे बढ़ाया। सा० स० प० 165.		गवेषणात्मक-निरूपणम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
गाँधीवाद		''गाँधीवाद, महात्मा गाँधी की विचार पद्धति का व्यापक नाम है। गाँधी के व्यक्तित्व के अनेक पक्ष थे, वे राजनेता थे, समाज-सुधारक थे, अर्थवेत्ता थे, शिक्षाशास्त्री थे और धर्मोपदेशक भी थे। समाज और शासन के संघटन तथा जीवन के अन्य अनेक पक्षों के बारे में उनके अपने विचार थे जिनका प्रतिपादन उन्होंने अपनी दैनिक साधना के मध्य से गुजरते हुए किया था।'' सा॰ को॰ पृ॰ 256.	गान्धिसम् परिप्रेक्ष्यम् पृ॰ 26.	गाँधीवादम्
गीति-कथा	गीति + कथा	गीतिकाव्यों के पुंजीभूत भावसत्य, दुःखान्त नाटकों के चिरन्तन संघर्ष और करुणा, गीति कथाओं की गति और प्रवहमानता, मुक्तकों का उक्ति-वैचित्र्य और नीति-सत्य —इन सभी पुराने साहित्य रूपों की शिल्पगत और वस्तुगत विशेषताओं को उपन्यास ने अपने व्यापक प्रसार में ग्रहण किया था। मा॰ मू॰ और सा॰ पृ॰ 163.		गीतिकथ
गीति-नाट्य	गीति— गीत से	''गीत-नाट्यों का आधुनिक रूप सन् 1954 में जन्म हो चुका था। पहले गीति-नाट्य संगीतपूर्ण दुःखान्त नाट्य	गीतिनाट्यम् परिप्रेक्ष्यम् पृ॰ 168	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	दे॰ साहित्यकोश पृ॰ 228. नाट्यम्— नटानां कार्यम्— श॰ क॰ गीति + 'नाट्य	के रूप में होता था। यूनानी दुःखान्त नाटकों को पुनरुज्जी-वित करने के उद्देश्य से गीति-नाट्य को पहले प्रस्तुत किया गया था। इसलिए इनके विषय भी यूनानी पौराणिक कथाओं से लिये जाते थे। फ्राँस में गीति-नाट्य की बड़ी उन्नति हुई। भारत में इस प्रकार के गीति-नाट्यों का प्रचार महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने शाँति-निकेतन में किया।'' सा॰ को॰ पृ॰ 260		
ग्रंथ समीक्षा	ग्रंथ—सन्दर्भे भावे घञ् समीक्ष— सम्यगीक्षतेऽनेन घञ् (वाच॰) ग्रन्थ + समीक्षा	आलोचना से हमारा अभिप्राय साहित्य-आलोचन अथवा आलोचना के सिद्धांन्त नहीं, व्यावहारिक ग्रन्थ-समीक्षा से है। आत्मनेपद पृ॰ 91.		ग्रन्थसमीक्ष
ग्रन्थिबन्धन	ग्रन्थि—	''हमारी संस्कृति ने धर्म और कला का ऐसा ग्रन्थिबन्धन	ग्रन्थिबन्धनम्	

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	ग्रन्थ् भावे इन् (वाच०) बन्धन— बन्ध भावे ल्युट् (वाच०) ग्रन्थि + बन्धन	किया था जो जीवन से अधिक मृत्यु में दृढ़ होता गया।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 46.	श० ता० पृ० 603.	
ग्रामगीत	ग्राम— ग्रस—मन्— आदन्तादेश: (वाच०) ग्राम + गीत	''ग्रामगीत शब्द से ग्रामविषयक या ग्राम में गाये जाने-वाले गाँव से लिये गये या ग्रामनिवासियों के गीत जैसे अर्थ मिलते हैं। किन्तु हिन्दी में कहीं इसे लोकगीत का पर्याय मान लिया गया है।'' सा० को० पृ० 281.		नाटनपाट्टु
ग्राहक	ग्रह + ण्वुल् (श० क०)	''कल्पना दो प्रकार की होती है-विधायक और ग्राहक। कवि में विधायक कल्पना अपेक्षित होती है और श्रोता या पाठक में अधिकतर ग्राहक।'' र० मी० पृ० 21.	ग्राहकन् श० ता० पृ० 604.	

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
घटनाप्रधान	घटना— घट—युच् (वाच)० प्रधान— प्र+धा—ल्युट् (वाच०) घटना+प्रधान	घटना उसमें प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से काफी है। पर घटना-प्रधान उपन्यास वह नहीं है। आत्मनेपद पृ० 72.		संभवबहुलम्
चमत्कार-वादी	चमत्कार— चमदित्यव्यक्तं क्रियते कृ भावे घञ् (वाच०) चमत्कार+वादी	पतनशीलता के क्षणों में, निराशा और कायरता की घड़ियों में बार-बार जनता ने इन नटों, बाजीगरों,तांत्रिकों, ऐन्द्रजालिकों और चमत्कारवादियों को मान्यता प्रदान की है......दावा करते हैं। मा० मू० और० सा० पृ० 116.		चमत्कारवाद
चरित्र-चित्रण	चरित्र— चर—इत्र स्वभावे (वाच०) चरित्र+चित्रण	''आजकल कथानक को उतना महत्व नहीं दिया जाता, जितना कि चरित्र–चित्रण और भावाभिव्यक्ति को। चरित्र-चित्रण का सम्बन्ध पात्रों से है।'' का० के० रू० पृ० 208.		पात्राविष्करणम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
चरित्रहीन	चरित्र+हीन	जो झूठ बोले, मजाक करे, वही गुणवान है। जो चरित्रहीन है,वेदों को छोड़े है,वही ज्ञानी तथा वैराग्यवान। हि० सा० और० वि० वा० पृ० 307.		स्वभावशुद्धिहीन
चित्रण	चित्र— चित्र भावे अच् चि—ट्रन् वा। (वाच०)	''ऐसा इसलिए होता है कि क्योंकि चित्रण (इलस्ट्रेशन) की स्थिति से उठकर आज की कला, तत्व और अर्थ की तलाश में समरूपता न ढूँढ़कर, गहरे अन्तर और बाह्य के आन्दोलन में रूप और प्रारूप को पुर्नव्यवस्थित करती है।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 44.	चित्रीकरणम् श० ता० पृ० 645.	
चित्रानुभव	चित्र—भावे अच् चि—दुन् (वाच०) चित्र+अनुभव	''जिनकी भावना किसी बात के मार्मिक पक्ष का चित्रानुभव करने में तत्पर रहती है, जिनके भाव चराचर के बीच किसी को भी आलंबनोपयुक्त रूप या दशा में पाते ही उसकी ओर दौड़ पड़ते हैं, वे सदा अपने लाभ के ध्यान से या स्वार्थबुद्धि द्वारा ही परिचालित नहीं होते।'' र० मी० प० 18.		चित्रानुभूति

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
चिन्तन—जगत्	चिन्तन— चिति भावे ल्युट्-अनुधाने (वाच०) जगत्— गम —क्विप् द्वित्वम् तुक् च (वाच०) चिन्तन + जगत्	''वह (कवि) तो चिन्तन-जगत् का अधिकारी है।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 41.	चिन्तामंडलम् जीवचरित्रसाहित्यम् पृ० 274.	
चिन्तन—धारा	चिन्तन + धारा धारा— धारि + अङ (वाच०) चिन्तन + धारा	जहाँ एक ओर सिद्धान्तों के स्तर पर मनुष्य की सार्वभौतिक सर्वोपरि सत्ता स्थापित हुई, वहीं भौतिक स्तर पर ऐसी परिस्थितियाँ और व्यवस्थाएं विकसित होती गयीं तथा उन्होंने ऐसी चिन्तनधाराओं को प्रेरित किया जो प्रकारान्तर से मनुष्य की सार्थकता और मूल्यवत्ता में अविश्वास करती गयीं। मा० मू० और० सा० पृ० 10.		विचारधा।
चिन्तन-पद्धति	पद्धति—	''कर्मकाण्ड के विस्तार से थके हुए कुछ मनीषियों ने		चिन्तापद्धति

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	पादेन हन्यते हन्-आधारे क्तिन् पदादेश: वा ङीप् (वाच०) चिन्तन + पद्धति	चिन्तनपद्धति के द्वारा ही आत्मा का चरम विकास सम्भव समझा।'' सां० कौ० आ० त० अ० नि० पृ० 104.		
चिन्तन-सम्प्रदाय	सम्प्रदाय— सम् + प्र + दा— भावे घञ् (वाच०) चिन्तन + संप्रदाय	किन्तु इन धाराओं के अधिकांश लेखकों ने यह भुला दिया कि मनुष्य इन सभी चिन्तन-संप्रदायों और मतवादों से और बड़ा है.................पूर्ण रूप से बांधी नहीं जा सकती। मा० मू० और० सा० पृ० 169		चिन्तारीति
चिन्तन—सीमा	सीमा— सीमन् वा डाप् (वाच०) चिन्तन + सीमा	किसी तरह मूल्यगत दायित्व की गुरुता और आचरण का संकल्प अपनी ही चिन्तन-सीमा में विकसित करने की उसकी प्यास भी इतनी तीखी रही है कि उसने एक वक्तव्य में विचित्र तर्कों द्वारा अपने अस्तित्ववाद को मानववाद की ही शाखा सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। मा० मू० और० सा० पृ० 129.		चिन्ता-सीम

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
चिन्तन — स्वातंत्र्य	स्वातंत्र्यं — स्वतन्त्रस्य भावः ष्यञ् (वाच०) चिन्तन + स्वातंत्र्य	साथ ही मनुष्य से चिन्तन-स्वातंत्र्य और विकल्प का आधार छीनकर, उसे इतिहास का नियन्ता न मानकर उसको गौरव से रहित बनाने में सफल हुआ । मा० मू० और० सा० पृ० 28.		विचार-स्वतंत्र्यम्
चिन्तन— स्वाधीनता	स्वाधीन — स्वस्य अधीनः (वाच०) चिन्तन + स्वाधीनता	पिछले बीस वर्षों की एक प्रमुख प्रवृत्ति यह रही है कि जिन क्षेत्रों में चिन्तन-स्वाधीनता है, उनमें धीरे-धीरे कथाकारों ने इन संकीर्ण मतवादों से मुक्त होकर व्यापक मानवतावादी भूमि पर अपनी कला की स्थापना की है । मा० मू० और सा० पृ० 170.		चिन्ता— स्वातंत्र्यम्
चेतन पक्ष	पक्ष + अच् (वाच०) चेतन + पक्ष	''मानस का चेतन पक्ष मनुष्य के सामान्य व्यवहार में व्यक्त होता है । मानस का यह भाग हमारी जाग्रत अवस्था में क्रियाशील रहता है । यह यथार्थ से संचलित होता है, विचारशील है, विवेक, तर्क, ध्यान, संवेदना तथा प्रत्यक्ष ज्ञान इसकी प्रक्रियायें हैं ।'' सा० को० पृ० 289.	चेतन श० ता० पृ० 673.	

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
चेतन-स्तर	स्तर—स्तृ— घञ् (आ०) चेतन + स्तर	मनुष्य की गरिमा का नये स्तर पर उदय हुआ और माना जाने लगा कि मनुष्य अपने में स्वतः सार्थक और मूल्यवान है—वह आन्तरिक शक्तियों से संपन्न चेतन-स्तर पर अपनी नियति के निर्माण केलिए स्वतः निर्णय लेनेवाला प्राणी है । मा० मू० और० सा०		चेतनदश
छन्दबद्धता	छन्दस + बद्ध→ छन्दोबद्ध (सं० वि०) छन्द— छदि—संवरणे + अच् (वाच०) बद्ध— बन्ध्—कर्मणि क्त (वाच०) छन्द + बद्धता	''जिस युग में मानव जाति के समस्त ज्ञान को एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ में संचरण करते हुए ही रहना पड़ता था, उस युग में उसकी प्रत्येक शाखा को अपने अस्तित्व केलिए छन्दबद्धता के कारण स्मृतिसुलभ पद्य का ही आश्रय लेना पड़ा ।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 58.	छन्दोबद्ध श० ता० पृ० 684.	वृत्तबद्धत

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
छाया-दृश्य	छाया—छो—ण— (प्रतिबिंबे) (वाच०) दृश्य— दृश्—कर्मणि—क्यप् श० क० छाया+दृश्य	''छलावे की तरह भासित हुए उस रूपक को 'छाया-दृश्य' कहते हैं।'' चिन्तामणि पृ० 200.		छायादृश्यम्
छायानाट्य	नाट्य— नटस्य इदं कृत्यम्—ष्यञ् (वाच०) छाया+नाट्य	''छायाकृति द्वारा अभिनीत पुत्तलिका-नाट्य को छायानाट्य कहते हैं। छायानाट्य आधुनिक चलचित्रों के मानों मूल रूप थे। उनमें चमड़े की कठपुतलियाँ बनाकर प्रकाश के आगे साधारण कठपुतलियों की भाँति नचाते थे और उनकी छाया आगे पड़े हुए पर्दे पर पड़ती थी। दर्शक-समूह पर्दे पर पड़नेवाली उसी छाया के रूप में नाटक देखता था।'' सा० को० पृ० 323.	पावक्कूत्तु श० ता० पृ० 998.	
छाया—रूप	रूप— रूप—क भावे	क्योंकि मम और ममेतरका साक्षात्कार ही मैं है, अगर ये सारे छाया-रूप उस संधि-स्थल की मायामयी उपज हैं, तो		छायारूपम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	अच् वा । (वाच०) छाया+रूप	मैं भी तो दोनों के परस्पर संघात का जीवन्मूर्त्त पुंज है.....। आत्मनेपद पृ० 234.		
जटिल ग्रन्थि	जटिल— जटा अस्त्यर्थे श्लच् (आ०) ग्रन्थि— ग्रन्थ—संदर्भ भावे करणादौ वा यथायथं सर्व-धातुभ्यः, इन् नित् स्वरः (वाच०)	एक धारा मनुष्यको व्यक्ति-रूप में परिकल्पित करके उसके उपचेतन और अचेतन मन की जटिल-गन्थियों को सुलझाने में तल्लीन हो गई और दूसरी धारा उसको समष्टि की एक सामान्य इकाई मानकर उसके वर्णाश्रित स्वभाव की व्याख्या करती रही। मा० मू० और० सा० पृ० 167.		जटिलग्रंथि
जड़वाद	जड़— जल—अच् डस्य लः (वाच०) जड़+वाद	''मानव के हृदय का साम्राज्य कितना व्यापक है। संसार में फैले हुए किसी भी राष्ट्र से अधिक इसकी परिधि है, किन्तु इस साम्राज्य की सीमा छूने का प्रयत्न भी हमारे विज्ञान का भौतिकवाद नहीं करना चाहता। वह अपने जड़वाद में पूर्ण रूप से सन्तुष्ट है।'' सा० शा० पृ० 138.		जडवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
जनतंत्र	जन — जन—अच् (वाच०) तंत्र— तन्यते तनोति वा कत्रादौ यथायथं ष्टुन् घञ् वा (वाच०) जन+तंत्र	''जनतंत्र शब्द अंग्रेज़ी शब्द 'डेमोक्रेसी' का हिन्दी पर्याय है। इस शब्द का प्रयोग चिन्तन के इतिहास में विभिन्न अर्थों में किया गया है। अपने व्यापक रूप में जनतंत्र एक निश्चित प्रकार की समाजव्यवस्था और शासनप्रणाली का द्योतक है।'' सा० को० पृ० 330.	जनाधिपत्यम् श० ता० पृ० 692.	
जन—भाषा	जन – जन—अच् (वाच०) भाषा — भाष्—अ (वाच०) जन+भाषा	वह काव्य-शास्त्र संस्कृत काव्यशास्त्र का अपरिपक्व हिन्दी उल्था मात्र था। संस्कृत उस समय जन–भाषा न थी। मा० मू० और सा० पृ० 147.		जनकीय भाष
जनवादी	जन+वादी	यही नहीं, बल्कि वर्ग-संघर्ष और जनवादी सांस्कृतिक परस्परा के जटिल रूप को समझे बिना उन्होंने समस्त		जनकीयम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		प्राचीन संस्कृति को सामन्तवादी संस्कृति करार देकर उससे विच्छिन्न हो जाने का भी नाम लगाया । मा० मृ० और सा० पृ० 149.		जनकीयम्
जनसाहित्य	जन— जन—अच् (वाच०) जन + साहित्य	जनसाहित्य सदा से और सबसे अधिक प्रतीकों और अन्योक्तियों के सहारे ही अपना प्रभाव उत्पन्न करता है । प्रयोगवाद पृ० 112.		जनकीयसाहित्यम्
जन्मान्तर-वाद	जन्मान्तर— अन्यत्—जन्म— (वाच०) जन्मान्तर + वाद	हमें तो जीव न की परंपरा में विश्वास है। जन्मान्तरवाद की अनन्त श्रृंखला में हमारे जीवन की अनुभूति है । सा० शा० पृ० 33.		पुनर्जन्मसिद्धान्त
जागरूकता	जागरूक— जागृ + ऊक (वाच०)	''उनके (शुक्लजी के) प्रयोग इतने संतुलित और अर्थ गंभीर्यपूर्ण हैं कि किसी शब्द के स्थान पर उसका पर्यायवाची शब्द कभी उपयुक्त नहीं हो सकता और इसी से उनकी जागरूकता और महिमा का प्रकाश है ।'' साहित्यानुशीलन पृ० 96.	जागरूक श० ता० पृ० 702.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
जातिवाद	जाति — जन —क्तिन् (वाच०) जाति + वाद	प्रयोगवादी समीक्षकों का मन्तव्य है कि आधुनिक युग में व्यक्ति यह अनुभव करता है कि साम्प्रदायिक तथा सामाजिक विशेषताएँ सारहीन हो गई हैं। अतः उसका विवेक जातिवाद, साम्प्रदायवाद, सामूहिकता तथा सामाजिकता के प्राचीन और परम्परागत आदर्श को व्यक्ति-निष्ठता की दृष्टि से देखने का आग्रह करता है। प्रयोगवाद पृ० 120.		सामूह्यवादम्
जातीयता	जातीय — जातौ भवः छ — (वाच०)	''इसमें सन्देह नहीं कि वे राष्ट्रीयता, या जातीयता की (दिनकर) भावनाओं से ओत–प्रोत हैं।'' साहित्यानुशीलन पृ० 183.		सामुदायिकत
जिज्ञासा	ज्ञा —भावे—अ— (वाच०)	''सामंजस्य की प्रक्रिया वास्तव में जिज्ञासा (क्वेस्ट) को एक सार्थक विवेकशीलता के स्तर तक स्थापित करने में ही है।'' न० प्र० पु० नि० प० 40.	जिज्ञास श० ता० पृ० 706.	

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
जीवदया–वादी	जीव— जीव कर्त्तरि क (वाच०) दया— दय—भिदा भावे अङ् (वाच०) जीव + दया + वादो	लेकिन जिस तरह चिरन्तन काल की भावना ने हमारे यथार्थ काल के बोध को मिटाया है, उसी प्रकार व्यापक जीवदया ने जीवित व्यक्ति के प्रति करुणा को मिटा दिया है। जीवदयावादी जीव–मात्र के प्रति दया रखता हुआ किसी भी जीव-मानव या मानव का कष्ट मज़े में देखता चलता है। मा० मू० और० जा० पृ० 103.		भूतदयावादी
जीवन—चरित	जीवन– जीव-भावे-ल्युट् (वाच०) चरित- चर-कर्मणि क्त (वाच०) जीवन + चरित	''किसी व्यक्तिविशेष के जीवन वृत्तान्तको जीवन कहते हैं। जीवनी का अंग्रेज़ी पर्याय 'लाइफ' अथवा 'बायोग्राफी' है। हिन्दी में जीवनी को जीवन चरित अथवा जीवन-चरित्र भी कहा जाता है।'' सा० को० पृ० 335.	जीवचरित्रम् श० ता० पृ० 708.	
जीवन दर्शन	जीवन + दशन	जर्मनी में माज़ीवाद के उदय पर विचार करते हुए उसने स्पष्ट कहा है कि ऐसा भयानक अमानुषिक जीवन-दर्शन पनप नहीं सकता था यदि मनुष्य क्रम–भग्न होकर अन्तरात्मा - रहित न हो गया होता। मा० मू० और सा० प० 31.		जीवित दर्शनम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
जीवनध्येय	ध्येय— ध्ये कर्मणि — यन् (वाच०) जीवन + ध्येय	रेखा का जीवन ध्येय और जीवन दर्शन? इस प्रश्न का उत्तर मेरे लिए कठिन हैं। आत्मनेपद पृ० 83.		जीवितलक्ष्यम्
जीवन-सत्य	जीवन + सत्य	''अपने अनुभवों की गहराई में, वह जिस जीवन-सत्य से साक्षात् करता है, उसे दूसरे केलिए संवेदनीय बनाकर कहता चलता है यह सौन्दर्य तुम्हारा ही तो है, पर मैं आज देख पाया।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 41.		जीवित–सत्यम्
ज्ञान-पक्ष	ज्ञान — ज्ञा + अपादाने क्तिन् (वाच०) ज्ञान + पक्ष	''पाश्चात्य काव्य-समीक्षक किसी वर्णन के ज्ञान-पक्ष (सबजक्टीव्) और ज्ञेय–पक्ष (आबजक्टीव्) अथवा विषयी पक्ष और विषय-पक्ष दो पक्ष लिया करते हैं-जो वस्तुएँ बाह्य, प्रकृति में हम देख रहे हैं उनका चित्रण ज्ञेय-पक्ष के अन्तर्गत हुआ, और उन वस्तुओं के प्रभाव से हमारे चित्र में जो भाव या आभास उत्पन्न हो रहे हैं वे ज्ञान पक्ष के अन्तर्गत हुए।'' र० मी० पृ० 97.		ज्ञानपक्षम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान-शब्द	विशेष
ज्ञेय–पक्ष	ज्ञेय ज्ञायते इति ज्ञा कर्मणि यत् (वाच०) ज्ञेय + पक्ष	पाश्चात्य काव्य-समीक्षक किसी वर्णन के ज्ञान–पक्ष (सबजक्टीव) और ज्ञेय–पक्ष (आबजक्टीव) अथवा विषयी पक्ष और विषय–पक्ष दो पक्ष लिया करते हैं। जो वस्तुएं बाह्य प्रकृति में हम देख रहे हैं उनका चित्रण ज्ञेय-पक्ष के अन्तर्गत हुआ, और उन वस्तुओं के प्रभाव से हमारे चित्र में जो भाव या आभास उत्पन्न हो रहे हैं वे ज्ञान-पक्ष के अन्तर्गत हुए। र० मी० पृ० 97.		ज्ञेयपक्षम्
तटस्थता	तटस्थ — तटे तिष्ठति — स्था — क (वाच०)	यह निजी दृष्टि भी जिन दो वस्तुओं से अनुशासित होती है वह है तटस्थता और भावुकताहीनता तटस्थता तो इसलिए आवश्यक है क्योंकि बिना कुछ दूरी रखे परिप्रेक्ष्य का ठीक दायित्व नहीं निभाया जा सकता। न० प्र० पु० नि० पृ० 218.	निष्पक्षत म० सा० च० पृ० 134.	
तत्व-दर्शन	तत्व — तनोति सर्वमिदमिति	घर है कि नहीं; यह प्रश्न कला का नहीं, तत्वदर्शन का है, द्वार है कि नहीं, यही प्रश्न कला की कसौटी है आत्मनेपद पृ० 230.		तत्वदर्शनम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	स्थान शब्द	विशेष
	दर्शन— दृश —भावकरणा- दौ ल्युट् (वाच०) तत्व + दर्शन			
तत्ववाद	तत्व— तस्य भावः तन — क्विप् (वाच०) तत्व + वाद	जो निबन्ध किसी तत्ववाद के विचार केलिए लिखे जाते हैं उनमें थोड़ा-बहुत प्राचीन ढंग अब भी पाया जाता है । सा० स० पृ० 137.		तत्ववादम्
तत्वान्वेषण-शास्त्र	अन्वेषण— अनु इष—भावे ल्युट् (वाच०) तत्व + अन्वेषण + शास्त्र	तत्वान्वेषण-शास्त्र मेटाफिसिक्स का हिन्दी रूपान्तर है।'' पा० का० की० प० पृ० 59.		तत्व-शास्त्रम्
तथ्यपूर्ण	तथ्य— तथा + साधु यत् (वाच०)	.... उस औपन्यासिक कृति में कितना ही विस्तृत और तथ्यपूर्ण विवरण हो, बौद्धिक ऊहापोह हो,...... और वह		तथ्यपूर्णम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथका नाम	समान शब्द	विशेष
	पूर्ण— पूर—क्त (वाच०) तथ्य+पूर्ण	उच्चकोटि का उपन्यास नहीं कहा जा सकता । मा० मू० और० सा० पृ० 164.		
तर्क-परम्परा	तर्क— तर्क भावे अच् (वाच०) परम्परा— पृ—पृ—वा— अच्— परम् अतिशयेन पृणाति पिपूर्ति वा (वाच०) तर्क+परम्परा	होती भी कैसे, जब कि अपेक्षया प्रबुद्ध-वर्ग भी 'हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्तान' को एक अविभाज्य इकाई, और एक अकाट्य तर्क-परम्परा मानता था, निरा भावनागत सत्य नहीं । आत्मनेपद पृ० 127.		युक्तिपरंपर
तर्क-प्रणाली	तर्क— तर्क भावे अच् (वाच०)	यह बात दूसरी है कि उनकी तर्क-प्रणाली चाहे पृथक् हो और उनकी इस अविवेक-भक्ति की परिणति अन्ततोगत्वा ... हुई थी- मा० मू० और सा० पृ० 23.		वादगति

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	प्रणाली— प्र+नी—ष्यन् (वाच०) तर्क+प्रणाली			
तादात्म्य	तादातमनो भाव: ष्यञ् (वाच०)	''दूसरे के बौद्धिक निष्कर्ष तो हमें अपने भातर उनका प्रतिबिंब खोजने पर बाध्य करते हैं, परन्तु अनुभूति हमारे हृदय से तादात्म्य करके प्राप्ति का सुख देती है ।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 41.	तादात्म्यम् श० ता० 751.	
ताल-मेल	ताल— ताल एव अण् (वाच०) मेल— मिल—णिच्— अच्—टाप् (वाच०) ताल+मेल	इसलिए प्रकाशक और पत्रों और पत्रकारों का ताल-मेल एक व्यावसायिक आवश्यकता है । आत्मनेपद पृ० 92.		समन्वयम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथका नाम	समान शब्द	विशेष
तीव्रानुभूतिवादी आलोचना-प्रणाली	तीव्र— तीव-रक् तिज्-वन् (वाच०) तीव्र+अनुभूति+वादी आलोचना-प्रणाली	जिस आलोचना में कृति के स्रष्टा की तीव्रानुभूति का स्पष्ट आकलन होता है उसे तीव्रानुभूतिवादी आलोचना कहते हैं।.........कलाकार जितनी ही तीव्रानुभूति दे सके उतनी हो उसकी कृति श्रेष्ठ होगी। तीव्रानुभूतिवादी आलोचना-प्रणाली में कलाकार की तीव्रानुभूति ही खोजी जाती है और उसके रूपों को प्रस्तुत किया जाता है। नाटक या काव्य में पात्रों का भाषावेशमय आक्रोश, अतिशयोक्तियों की स्थिति आदि तीव्रानुभूति के ही रूप हैं। सा० को० पृ० 325.		तीव्रानुभूतिवादी-निरूपणम्
तुकबन्दी	तुक्— तुक्—तुज— प्राणे+क्विप् (श० क०) बन्दी— (आ०) तुक+बन्दी	क्योंकि बिना इसका निबटारा किये यह कैसे बताया जा सकता है कि मेरी आरम्भ की तुकबन्दियों में से-या बिना तुक की लययुक्त पंक्तियों से—किसे कविता माना जाय? आत्मनेपद पृ० 19.		नाल्क्कालि

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
तुकान्त-प्रियता	तुकान्त + प्रियता	मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भले ही तुकान्तप्रियता के कारण विकृति आ गई हो या 'यशोधरा', 'सुरैया' या 'मधुबाला' बन गई हो पर विद्वान समीक्षक को इससे आगे देखना भी अभीष्ट था । प्रयोगवाद पृ० 181.		अन्त्यानुप्रासप्रेमम्
तुलनात्मक समीक्षा	तुल—ल्युट्—तुलनं (आ०) समीक्षा—सम्यगीक्षते अनेन-घञ् (वाच०)	''तुलनात्मक आलोचना में मूल्य का बाह्य साक्ष्य ढूँढा जाता है और तुलना द्वारा सापेक्ष रूप से वैशिष्टय-निर्धारण होता है । अरसिक और अल्पज्ञानवाले व्यक्तियों से व्यवहृत होने पर तुलनात्मक समीक्षा हास्यास्पद बन जाती है ।'' सा० रू० पृ० 157.	तुलन श० ता० पृ० 777.	
त्रिपार्श्ववाद	पार्श्व—स्पृश—श्वण्—धातोः पृच् (वाच०)	''और जिस प्रकार चित्रकला में अनेक आधुनिक प्रवृत्तियाँ रोमेण्टिसिज़्म, प्रतीकवाद, प्रभाववाद, अभिव्यंजनावाद, रूपविधानवाद, त्रिपार्श्ववाद, परावस्तुवाद, यथार्थवाद आदि प्रचलित हैं, उसी प्रकार लेखक की विचार धारा के		त्रिमानवादम्

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	त्रि+पार्श्व+वाद	अनुसार रेखाचित्र के चित्र भी विविध प्रवृत्तियों के द्योतक हो सकते हैं।'' साहित्यानुशीलन पृ॰ 49.		
दमित—इच्छा	दमित— दम्यते स्म दम—णिच्—क्त (वाच॰) इच्छा— इष—भावे श दमित+इच्छा	उसने यह माना था कि मनुष्य का अवचेतन जगत् उसकी दमित-इच्छाओं का सुरक्षित कोष है जहाँ से वे अज्ञात रूप से, छिपकर मनुष्य के समस्त व्यापारों को, उसके सृजन को प्रभावित करती है। मा॰ मू॰ और॰ सा॰ पृ॰ 159.		दमिताभिलाषम्
दमित—वृत्ति	दमित+वृत्ति वृत्ति—वृत—क्तिन् (वाच॰)	........फ्रायड़ ने मनुष्य के अन्तर्मन का विश्लेषण कर यह स्थापित किया कि वह तो न जाने किन अज्ञात दमित वृत्तियों, अचेतन आकांक्षाओं से परिचालित होता रहता है। मा॰ मू॰ और॰ सा॰ पृ॰ 29.		दमितवृत्ति

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
दल– निष्ठा–	दल— दल्–अच् (वाच०) निष्ठा— नि+स्था– भावे अ (वाच०) दल+निष्ठा	जिस प्रकार दल-निष्ठा उसके स्वतंत्र विवेक को सीमित करती है, उसी प्रकार संस्था–निष्ठा भी । आत्मनेपद पृ० 113.		कक्षिक्कूरु
दायित्व	दायित— दायं दानं करोति दायि कर्मणि क्त (वाच०)	मानवीय गौरव का अर्थ यह है कि मनुष्य को स्वतन्त्र सचेत दायित्वयुक्त माना जाय जो अपनी नियति, अपने इतिहास का निर्माता हो सकता है । मा० मू० और० सा० पृ० 21.		उत्तरवादि
दायित्व— भावना	भावना— भू—णिच्— ल्युट् वा (आ०) दायित्व+भावना	यदि पाठक यह नहीं जानता फिर भी इनका साहित्य उसके हृदय को छूता है, उसकी वृत्तियों को परिष्कृत करता है.........उसकी दायित्व-भावना को सचेत करता है । मा० मू० और० सा० पृ० 152		दायित्वम्

हिन्दी—शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
दुःखवाद	दुःख दुःख अच् वा (वाच०) दुःख + वाद	अज्ञेय की सांस्कृतिक चेतना के साथ साथ इस प्रकार के निराशावाद को देखकर एक विदेशी आलोचक की यह बात याद हो आती है कि, ''जिस जाति की संस्कृति युगों के बोझ से बोझिल हो रही है उसमें दुःखवाद और निराशा स्वभाविक है । प्रयोगवाद पृ० 205.		दुःखवादम्
दूतकाव्य	दूत — दु—गतौ (वाच०) दूत + काव्य	''दूतकाव्य- दूरस्थ प्रिय के पास सन्देश भेजने की प्रथा प्राचीन है । प्राचीन काव्य में मेघ, हंस आदि को दूत बनाकर संदेश भेजने के निदर्शन हुए हैं ।'' सा० को० पृ० 337.	सन्देशकाव्यम् म० सा० च०	
दूरदर्शिता	दूर— दुरु + इण् दर्शिता— दृश्— णिच् + क्त (वाच०)	''यद्यपि वर्माजी ने रानी लक्ष्मीबाई को वीरता, आत्म-त्याग और सहानुभूति की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया है, लेकिन फिर भी पाठक को इस कमी का अनुभव होता है कि लेखक रानी के उज्ज्वल चरित्र में राजनीतिक दूरदर्शिता	दूरदर्शि श० ता० पृ० 831.	

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		और बुद्धिमानी का संयोग नहीं करा पाया।'' साहित्यानुशीलन पृ॰ 245.		
दृश्य-मंडल	दृश्य— दृश्—कर्मणि क्यप् (वाच॰) मंडल— मडि—कलच् (वाच॰) दृश्य+मंडल	व्यापक दृष्टि इस या उसको अधिक अच्छी तरह देखने में नहीं है बल्कि दृश्य-मंडल का व्यास बढ़ाने में है। आत्मनेपद पृ॰ 120.		दृश्यमंडलम्
दृष्टान्त—कथा (उपमित कथा)	दृष्टान्त— दृष्टोऽन्तः यत्र (वाच॰) दृष्टान्त+कथा	''पैरेबिल को दृष्टान्तकथा या उपमित कथा कह सकते हैं। उसमें पात्र तो प्रायः मानव होते हैं और उसकी घटनाएं किसी नीति, धर्म या आचार-संबंधी सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिए दृष्टान्त रूप में नियोजित होती है।... .... सा॰ को॰ पृ॰		दृष्टान्तकथ

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
दृष्टिकोण	दृष्टि: दृश् भावे क्तिन् (वाच०)	''अत: कलाकार के जीवन-दर्शन में हम उसका जीवन-व्यापी दृष्टिकोण मात्र पा सकते हैं।'' सा० की आ० ता० अ० नि० पृ० 42.		वीक्षणकोटि
दृष्टि—बिन्दु	दृश्—भावे—क्तिन् (वाच०) बिन्दु—बिदि-उ. (वाच०) दृष्टि + बिन्दु	''जिस युग का दृष्टिबिन्दु सामाजिक विकास था, उसमें कर्त्तव्य-सम्बन्धी आदर्श उच्चतम सीमा तक पहुँच गये।'' सा० की० आ० त० अ० नि० पृ० 158.	वीक्षणकोटि क० सा० ओ० प० पृ० 86.	
द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद	द्वन्द्व—द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ (वाच०) भौतिक—भूत—ठक् (आ०)	''साथ ही साथ द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का साहित्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मनोभावों पर शासन करने में समर्थ होता है।'' सा० शा० पृ 164.	वैरूध्यात्मक भौतिकवादम् वि० वि०	

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	दर्शन — दर्श् — भावकरणादौ ल्युट् (वाच०)			
धर्मकथा	धर्म- धृ–मन् (वाच०) धर्म + कथा	''अंग्रेज़ी के 'मिथ्' शब्द के पर्याय रूप में हिन्दी में धर्मकथा शब्द ग्रहण किया गया है। मानव-समाज की आद्यतम कथाएँ धर्मकथा की सम्पत्ति है।'' सा० को० पृ० 351.	पुरावृत्तम् श० ता० पृ० 1018.	
धर्मतत्व-विवेचन	धर्म– धृ-मन् (वाच०) विवेचनम् (आ०) धर्म + तत्व + विवेचन	''मैंने कई प्रकार के कामों में हाथ लगाया है, सभी में न्यूनाधिक दक्षता दिखायी है ...... रेखांकन, चित्रकारी, ...रसायन, धर्मतत्व-विवेचन, कोश-निर्माण. .... और रेलवेस्टेशन पर बैठकर लम्बे और उबानेवाले पत्रों का लेखन।'' आत्मनेपद पृ० 215.		धर्मतत्वविवेचनम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
धारणा	धारण— धरि—ल्युट् (वाच०)	यह सिटवेल नहीं, बल्कि यूरोप का मानस बोल रहा था जो ''लटक रहा था बीचोबीच—जीसस् के और उस खाई के जहाँ इस संसार का अन्त हो गया है ।'' ...... और जहाँ भले बुरे की दीवार टूट गई है । जहाँ शब्द कुछ और हैं, अर्थ कुछ और । धारणा कुछ और है आचार कुछ और है; कर्म कुछ है, परिणाम दूसरा । मा० मू० और० सा० पृ० 19.		संकलषम्
धारावाहिक	धारावाही— धारया वहति— वह—णिनि (वाच०)	इस आदर्श की दृष्टि से इसका कथानक भले ही धारा-वाहिक कहा जाय, पर 'वस्तु' को आदर्श मात्र से कुछ अधिक होना चाहिए । हि० ना० के० सि० और० ना० पृ० 213.	धारावाहि सी० जे० तो० पृ० 53.	
धारावाही (कथा)	धारा— धारि—अङ (वाच०)	एकने तो डयूमा के 'काउण्ट आफ़ मांटेक्रिस्टो' के आधार पर हिन्दी धारावाही कथा की पहली किश्त दी, दूसरे ने इस समय याद नहीं किया । आत्मनेपद पृ० 23.		तुटकर्कथ

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	वाहो— वाही वह—णिनि धारया वहति (वाच०)			
धीमत्ता	धी—मतुप् (वाच०)	… ….और इस प्रकार स्वयं अपनी धीमत्ता, सहृदयता, विज्ञता या ममज्ञता को प्रमाणित करो—कैसा सूक्ष्म चारा डाला गया है—पाठक की अहन्ता के भोले पंछी को लुभाने केलिए ! …….. आत्मनेपद पृ० 125.		प्रतिभ
नकेनवादी		नकेनवादी आधुनिक युग में साधारणीकरण की संभावना पर संदेह व्यक्त करते हैं ।……..उनका कथन है कि, प्रेषण के इन अत्यन्त सुलभ साधनों से मनुष्य के अनुभव इतनी जल्दी से विस्तृत हो रहे हैं कि केन्द्र (आत्मा) और वृत्त का सम्बन्ध ही टूट जाने के खतरे में पड़ गया हैं । प्रयोगवाद प० 120.		प्रपद्यवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
नया साहित्य		पर आज जब हम नये साहित्य की बात कहते हैं, क्यों सचमुच नया साहित्य ही हमारे ध्यान में होता है—वह साहित्य जो आज इस समय लिखा जा रहा है, या कल लिखा जावेगा? आत्मनेपद पृ० 105.		नवसाहित्यम्
नवजागरण	नव— नव —नु—स्तवे भावे अप् (वाच०) जागरण— जागर्—भावे ल्युट् (वाच०) नव+जागरण	'नवजागरण' शब्द यूरोप के मध्ययुग और आधुनिक युग के बीच की संक्रान्ति की अवस्था का वाचक है। नवजागरण युग कलासिकी (यूनानी–रोमीय) विद्या के पुनरुद्धार और प्रत्यावर्तनं (रिवाइवल) का युग था। किन्तु पुनरुद्धार और प्रत्यावर्तनमात्र को 'नवजागरण' समझ लेना भूल होगी। सा० को० पृ० 403.		नवोत्थानम् म० सा० च० पृ० 210.
नवशास्त्र-वाद	नव—नु स्तवे भावे अप् (वाच०)	सत्रहवीं शताब्दी के मध्य तक नवजागरण का प्रभाव प्रायः समाप्त हो चुका था और एक नवीन साहित्यिक		नूतनशास्त्रवादम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान-शब्द	विशेष
	शास्त्र—शास—ट्रन् (वाच०) नव+शास्त्र+वाद	आन्दोलन का आविर्भाव हुआ, जिसे नीयोक्लासीसिज़्म अर्थात् नवशास्त्रवाद कहते हैं । सा० रू० पृ० 164.		
नाटकीयता	नाटकीय—नाटके भव: (वाच०)	इस तरह रंगमंज पर एक पात्र का आदि से अन्त तक बना रहना नाटकीयता केलिए एक बड़ा खतरा है । हि० ना० के० सि० और० ना० पृ० 209.	नाटकीयत सी० जे० तो० पृ० 82.	
नाटकीय संवाद	नाटकीय—नाटके भव: (वाच०) नाटकीय+संवाद	फिर कभी कभी नाटकीय संवाद सूझे, पर उन्हें मैं ने बार बार दुत्कार दिया क्योंकि बरसों से ठान रखा था कि नाटक नहीं लिखूँगा, नहीं लिखूँगा......उधर मेरी गति नहीं है और विना जीवित रंगमंच के हो भी नहीं सकती । आत्मनेपद-पृ० 243.		नाटकीय-संभाषणम्
नाट्य–महाकाव्य		''किन्तु कुछ महाकाव्य ऐसे भी होते हैं जिनमें आद्यन्त नाटकों की कथोपकथन वाली पद्धति ही अपनायी गयी		नाट्यमहाकाव्य

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		रहती है, यद्यपि वे नाटक नहीं होते और न अभिनय केलिए उनकी रचना ही होती है। ऐसे ही महाकाव्यों को नाट्यमहाकाव्य कहा जाता है।'' सा० को० पृ० 386.		
नाद—सौन्दर्य		''नाद—सौन्दर्य से कविता की आयु बढ़ती है। तालपत्र, भोजपत्र, कागज़ आदि का आश्रय छूट जाने पर भी वह बहुत दिनों तक लोगों की जिह्वा पर नाचती रहती है।'' रस० मी० पृ० 38.		नाद-सौंदर्यम्
निबन्ध		''अंग्रेजी के 'एस्से' के स्थान पर ही निबन्ध शब्द का हिन्दी में प्रयोग होता है। आज निबंध के पर्याय के रूप में प्रबन्ध में अतिरिक्त लेख, सन्दर्भ, रचना और प्रस्थान शब्द भी प्रचलित है। सा० को० पृ० 408.	उपन्यासम् श०ता०पृ० 294.	

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	स्थान शब्द	विशेष
नियतिवाद	नियति— नि + यम — करणे क्तिन् (वाच०) नियति + वाद	अपने नियतिवाद और मानव-स्वातन्त्र्य के प्रति अपनी आस्था में मार्क्स एक संगति स्थापित करना चाहता था और जब एक ही तर्क-प्रणाली द्वारा यह संभव न हो सका तो उसने कभी इस पर और कभी उस पर बल दिया । मा० मू० और० सा० पृ. 109.		नियतिवादम्
निरंकुशता	निरङ्कुश — निर्गतोऽङ्कुशो स्व प्रतिबन्धको यस्य (वाच०)	''जब हम उद्देश्य के आग्रह को नहीं मानते और विवेक और आत्मनिर्णय को हम निरंकुशता (आरबिट्रैरी) की सीमा तक ले जाकर विवेक और निरंकुशता में एक संगीत देखते हैं; जब हम व्यक्ति-मर्यादा को, व्यक्ति-स्वातन्त्र्य को स्वीकार करते हैं......विवश हो जाते हैं ।'' न० प्र० पु० नि० पृ० 43.	निरंकुशता श० ता० पृ० 898.	
निरपवाद	नर् + अप् + वद् + भावे घञ् (वाच०)	हमारी धारणा है कि यह बात भारतीय रेडियो के समूचे इतिहास के बारे में निरपवाद सत्य के रूप में कही जा सकती है । आत्मनेपद पृ० 112.		सार्वत्रिकम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
निरपेक्ष	निर्गता अपेक्षा यस्य (वाच०)	"मेरा अपना विचार है कि वास्तविक आधुनिक भाव-बोध उसी व्यक्ति को प्राप्त हो सकता है जो सतही लाक्षणिकता से मुक्त होकर नितान्त निरपेक्ष (सेक्युलर) तत्वों को जन्म देने में समर्थ होता है और इस दृष्टि से जिसमें यह सामर्थ्य होती है कि वह एक सर्वेक्षणिक दृष्टि को अपना सके।" न० प्र० पु० नि० पृ० 54.		मतेतरम्
निरर्थकता	निरर्थक निर्+अर्थ+कप् (वाच०)	"लेकिन यह अर्थहीनता निरर्थकता (फ्यूटिलिटी) नहीं है और न कभी भी अर्थहीनता को निरर्थकता से जोड़ना ही चाहिए क्योंकि यह अर्थहीनता नैराश्य से प्रजनित नहीं होती।" न० प्र० पु० नि० पृ० 25.		निरर्थकम् श०ता०पृ० 899.
निराशा-वादिता	निराशा— निर्गता आशा यस्य निराशा+वादिता	"छायावाद का कवि अपने भावों पर चारों ओर बन्धन-ही-बन्धन देखता है। उसके मध्यमवर्गी सुख-स्वप्न टूट चुके हैं। वह सामाजिक जीवन की चेतना को विकराल और		निराशावादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
		भयानक पाता है । उसकी चेतना आज उसे ही काट रही है । पूँजीवाद की तरह उसकी चेतना भी आज मानवता का प्रतिनिधित्व नहीं करती । निदान इतना रुदन-क्रन्दन, इतनी निराशावादिता ।'' साहित्यानुशीलन पृ० 77.		
निरुद्देश्यता	उद्देश्य- उद्—दिश्— ण्यन् (वाच०) निर्+उद्देश्यता	''लघु-मानव की कल्पना ने यदि अपनी सृजन—प्रक्रिया से मनुष्य के सामने कुछ नये परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत किये हैं तो उनको स्वीकार करने का आग्रह उसका नहीं है । वह केवल एक मानसिक स्थिति का प्रतीक है जो प्रत्येक भाव और अनुभूति में केवल सार्थकता की तलाश करने की चेष्टा करता है; लेकिन सार्थकता को आरोपित करने की अपेक्षा वह निरुद्देश्यता, अर्थहीनता.. ....और विकसित करने में कोई सहायता मिलती है । न० प्र० पु० नि० पृ० 102.		निरुद्देशत

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
निर्णयकारी समालोचक	निर्णय— निर्+नी—भावे अच् (वाच०) कारी— कृ+इञ्+ङीष् (वाच०) निर्णय+कारी सम+आलोचक	''यह तो निश्चित है कि समालोचक अपने देश-काल से किसी-न-किसी रूप में, प्रभावित रहता है। उसकी अपनी भी रुचि होती है, पर इसके होते हुए भी, उसमें एक प्रकार की तटस्थता का होना वाँछनीय है। इसी को मेथ्यू आर्नल्ड ने समालोचक की तटस्थ रुचि कहा है........तो इस प्रकार की आलोचना में तटस्थता की बहुत आवश्यकता पड़ती है और इसके द्वारा समालोचक, निर्णयकारी समालोचक होने के दोष से बच जाता है। सि० और० अ० पृ० 302.		शास्त्रीयनिरूपकंन
निर्णयात्मक आलोचना	निर्णय— निर्+नी—भावे अच् (वाच०)	''निर्णयात्मक आलोचना जिसमें इन नियमों के आधार पर गुण-दोष-विवेचन की तथा श्रेणीबद्ध करने की प्रवृत्ति रहती है।'' सि० और० अ० पृ 291.		शास्त्रीयनिरूपणम्
निर्णायक तत्व	निर्णायन— निर्+नी—	प्रगति (नियति का क्रमिक साक्षात्कार) हमसे निरपेक्ष नहीं है। वह हमसे आबद्ध है, उसके निर्णायक तत्व हम		निर्णायक तत्वम्

हिन्दी–शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण–वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	णिच्—ल्युट् (वाच०) निर्णायक (आ०) निर्णायक+तत्व	ही हैं। मा० मू० और० सा० पृ० 37.		
निर्वैयक्तिक	व्यक्ति— वि+अन्ज्— क्तिन् (वाच०) निर+वैयक्तिक	ऐसी देशा में वह कलाकार के द्विविध रूप मानता है। एक में वह एक साधारण मनुष्य होता है जिसके निजी सुख-दु:ख, कुण्ठाएँ आकांक्षाएँ हो सकती हैं, दूसरे रूप में वह एक निर्वैयक्तिक रचना प्रक्रिया का विधायक मात्र होता है। मा० मू० और० सा० पृ० 160.		निर्वैयक्तिकम्
निस्संगता	निस्—संग— सन्ज— भावे घञ् (वाच०)	''वाजपेयी जी ने अपनी भूमिका में एक जगह संकेत किया है कि यौवन–सुलभ सौन्दर्य की लालसा जहाँ वह सौन्दर्य तक ही सीमित है, भोग नहीं है। यदि उसमें पर्याप्त निस्संगता है तो वह काव्य का आभूषण ही है।'' साहित्यानुशीलन पृ० 211.		निस्संगत

हिन्दी शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण—वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
नीतिध्वजी	नीति— नी + क्तिन् (वाच०) ध्वजी—। ध्वजिन्—अच्—इनि (वाच०) निति + ध्वजी	कृति की महत्ता या उस के स्थायित्व की संभावना, बाहर की बातों से कोई संबन्ध नहीं रखती, और लेखक के जीवन की घटनाएँ भी इस संदर्भ में 'बाहर की बातें' हैं। बडे बडे नीतिध्वजी बकवास लिखे गये; कभी, कोई आवारा भी बडी चीज़ लिख गया।........................ आत्मनेपद पृ० 80.		नीतिवादि
नीतिसत्य	सत्य— सत—हित—यत् (वाच०) नीति + सत्य	गीति-काव्यों के पुञ्जीभूत भावसत्य, दुःखान्त नाटकों के चिरन्तन संघर्ष और करुणा, गीति-कथाओं की गति और प्रवहमानता, मुक्तकों का उक्तिवैचित्र्य और नीतिसत्य इन सभी पुराने साहित्य-रूपों की शिल्पगत और वस्तुगत विशेषताओं को उपन्यास ने अपने व्यापक प्रसार में ग्रहण किया था। मा० मू० और० सा० पृ० 163.		नीतिसत्यम्
नूतन—रहस्यवाद	नूतन— नव एव स्वाथ तनप्	'नूतन रहस्यवाद' अपनी अन्तिम परिणति में 'अबुद्धिवाद' और 'अन्धविश्वास' का ही पर्याय बन जाता है—		नूतनरहस्यवादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
	नूतन + रहस्य + वाद	इतना तो साधारणतया अनुमेय है । साहित्यानुशीलन पृ० 2.		
नैतिकता	नीति—नी—क्तिन् (वाच०)	जब नैतिकता के पुराने आधार नहीं रहते-तब मानव कैसे नैतिक बना रह सकता है, या रह सके-यह प्रश्न तो कुछ ऐसा है कि कलाकार को ललकारे । आत्मनेपद पृ 67.		धार्मिकतत्वम्
नैतिकता-वाद		ईसाई-धर्म के बढ़ते हुए प्रभाव तथा उसके उग्र नैतिकतावाद ने कला को घातक और त्याज्य घोषित कर दिया, जैसाकि सेन्ट आगस्टाइन और वोयेथियस के लेखों से सिद्ध होता है । सा० रू० पृ 164.		धार्मिकतावादम्

हिन्दी-शब्द	व्युत्पत्ति	उदाहरण-वाक्य और ग्रंथ का नाम	समान शब्द	विशेष
नैसर्गिक आलोचना-प्रणाली	नैसर्गिक-निसर्गादागत: ठक् (वाच०) नैसर्गिक— आलोचना-प्रणाली	नैसर्गिक आलोचना प्रणाली :— इस प्रणाली में कृति और आलोचक के मध्य में कोई साधक या बाधक उपकरण प्रस्तुत नहीं होता। ऐसी आलोचना की उत्कृष्टता आलोचक के कलासंबन्धी उच्च मानसिक परिष्कार पर ही अवलम्बित रहती है। उसमें आलोचक प्रायः 'कला कला के लिए' सिद्धान्त का अनुसरण करता है। सा० को० पृ० 425.		नैसर्गिकनिरूपण-प्रणाली

हिन्दी विभाग के अन्य प्रकाशन

	मूल्य
मलयालम काव्य-धारा (प्राचीन खंड)	12-00
मलयालम काव्य-धारा (आधुनिक खंड)	12-00
केरल की जनकथाएँ	12-00
Common Vocabuilary in Hindi and Malayalam	20-00
वळ्ळत्तोल—व्यक्तित्व और कृतित्व मलयालम् नाटक	

दक्षिण के विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्यापन
दक्षिण में रामकाव्य

प्राप्ति-स्थान :-

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
कोचिन यूनिवर्सिटी
682 022